8731

श्री काष्ठजिह्व (देवतीर्थ) स्वामी
ग्रन्थमाला
प्रथम-पुष्प

रामसुधा

५०३४

अनन्त-चरण श्री काष्ठ-जिह्वा स्वामी कृत

राम सुधा

स्व० श्रीमान् काशिराज श्रीईश्वरीप्रसादनारायणसिंह
कृत टीका सहित

माता अन्नपूर्णा और पिता रघुनन्दन
जी की पुण्य स्मृति में आचार्य विश्वनाथ
प्रसाद मिश्र द्वारा प्रदत्त।

सम्पादक—रामजी मिश्र एम. ए.

सहायक—सत्यनारायण खण्डूड़ी शास्त्री

सन् १९६२ ई०

4038

भूमिका

श्री देवतीर्थ स्वामी (काष्ठजिह्व स्वामी) ग्रंथ माला का प्रथम-पुष्प आपके हाथों मे है। इसकी सरसता, सुन्दरता एवं सुगंधि की समीक्षा तो सहृदय संत ही कर सकेंगे—'मार्मिकः को मरन्दाणामन्तरेण मधुव्रतम्'। व्यास, बाल्मीकि एवं तुलसी की परम्परा को पुनरूर्जित करने वाले श्रीस्वामी जी का इतिवृत्तात्मक परिचय अनुसंधान का विषय है। 'तुलसी भवन' (रामनगर दुर्ग) इसके लिये प्रयत्नशील है। श्रीदेवतीर्थ स्वामी स्व० काशीनरेश महाराज ईश्वरी प्रसाद नारायण सिंह के गुरु थे। उन्ही के आग्रह एवं अनुरोध से श्रीस्वामीजी ने अपने इन ग्रंथों की रचना की है। श्रीकाष्ठजिह्व स्वामी महान् विद्वान एवं अलौकिक महात्मा थे। शास्त्र, संगीत एवं साहित्य के क्षेत्र मे उनकी अद्भुत् प्रतिभा थी।

श्रीस्वामीर्जी की सभी रचनायें 'काशिराज-सागर' नामक संग्रह के अन्तर्गत हैं। 'रामसुधा' उसी सागर की सुधा है। रामायण के आधार पर ही इसकी रचना की गई है परन्तु पुनरुक्ति रूप मे नहीं, प्रत्युत निरुक्ति रूप मे। विभिन्न रामायणो के विरोधों का समन्वय, अपेक्षित शंकाओं का समाधान एवं अद्भुत अर्थों का प्रतिपादन इस ग्रंथ की प्रमुख विशेषता है। उत्तरकांड के अन्तर्गत 'राम सेवा' का उपासना की दृष्टि से 'सीता हनुमत् संवाद' का सैद्धान्तिक दृष्टि से एवं षट्ऋतु वर्णन का साहित्यिक दृष्टि से विशेष महत्व है। पूरा ग्रंथ संगीतात्मक राग रागिनियों से निबद्ध है।

इस ग्रंथ की टीका श्री स्वामीजी के शिष्य स्व० काशी नरेश महाराज ईश्वरी प्रसाद नारायण सिंह ने की है। टीका के दो खर्रे 'सरस्वती भंडार' (रामनगर दुर्ग) मे प्राप्त हैं। दोनों खर्रों का नाम क्रम से **क** तथा **ख** रखा गया है।

मूल पद श्री स्वामीजी के साक्षात् स्वहस्तलेख से मिलाये गये हैं, जो 'सरस्वती भंडार मे सुरक्षित हैं। मूल पदों के कुछ प्रकीर्ण पत्र भी हैं। उनका पाठ भेद मूल के साथ ही ऊपर नीचे बटा के रूप मे दे दिया गया है। यथा—

'दानी दास कलप तरिवर / कल्प साषी सो राम रंग मे चूर' (८२)।

'रामसुधा' के साथ ही 'गणेश विंदु' भी दिया जा रहा है। वस्तुतः वह 'देव सुधा' का मंगलाचरण ही है। 'गणेश विंदु' की एक विशेषता यह है कि यह ग्रंथ खंडित रूप मे ही प्राप्त है। सम्भवतः इसकी रचना ही इसी रूप मे की गई है। जिस प्रकार गणेश जी की मूर्ति खंडित होकर (गणेश जी को एकही दांत है) भी अखंडित फल देती है उसी तरह यह ग्रंथ भी खंडित रूप मे ही सम्पूर्ण है।

'षंडित होय अषंडित फल को देत लोग निरधारै
येक दंत है देव गजानन विघन समूह निवारै' (काशी बिंदु)

अनुक्रम

प्रकरण		पृष्ठाङ्क
गणेश बिंदु	... ...	३
बालकांड	... ...	२१
अयोध्या कांड	... ...	२३
अरण्य कांड	... ...	२७
किष्किन्धा कांड	... ...	२८
सुन्दर कांड	... ...	३०
लंकाकांड	... ...	३३
उत्तरकांड	... ...	६२
रामसेवा		५२
सीताहनुमत्संबाद		७४
रामराज्य वर्णन		७५
षड्ऋतु वर्णन		८२

संकेत

❀ ❀ ❀ —ऐसे स्थलों पर खर्रे मे प्रतीक देकर टीका के लिए स्थान रिक्त है।

( ) { } [ ]—कोष्ठान्तर्गत सभी शब्द क्रम से पूरक, व्याख्यात्मक तथा पर्यायबोधक—सम्पादक के हैं।

(( )) —खर्रे के भ्रामक शब्द।

द्र० —द्रष्टव्य।

गणेश विंदु

[१]   भैरव

देवसुधा बिकसत जनु पंकज की कली है
सकल देवता निवास मनहुँ मेरु थली है १

{ गणेश विंदु की टीका नहीं है, निम्नांकित टिप्पणियां सम्पादक की हैं। }

(देवसुधा ग्रंथकार की हिन्दी में तीन प्रमुख रचनायें 'राम सुधा' 'श्याम सुधा' तथा 'पंचक्रोश सुधा' ॥ देवता निवास० तु० 'मेरु सिषर······सोई जन्म भूमि जहँ देवतन को निवास······' हनुमतविन्दु १ ॥)

सरस महक पाइ जहाँ झूमत मन अली है
तापन के नाम नही मनहुँ कुंज गली है २

(अली भ्रमर ॥ तापन गरमी ॥)

प्रथम जहाँ श्री गनेस पूजा रति भली है
सुमिरत जेहि बिघुनन की होति दलमली है ३

(प्रथम जहाँ० जिस 'देवसुधा' नामक ग्रन्थ में सर्वप्रथम 'गणेश विंदु' के रूप में श्री गणेश जी की उपासना है ॥)

जाहि देषि झगरन की सब बलाय टली है
राम देव को प्रताप सहित जनक लली है ४   १

(जाहि देषि जिस 'देवसुधा' नामक ग्रंथ के अवलोकन से झगरन की सब वलाय टली है, क्योंकि यह समन्वयात्मक ग्रंथ है ॥)

[२]

श्री गनेश पूजन मे ब्रह्म के बिचार हैं
गज नर दोउ भावन के लायक उपचार हैं १

(गजनर दोउ० गज तथा मनुष्य दोनों के योग्य उपचारों से श्री गणेश जी की पूजा होती है, द्र० इसी पद का तृतीय, चतुर्थ चरण ॥)

तत् पद गज त्वं पद नर मिलित ए अकार हैं
असि पद सो झलझलात जगत के अधार हैं २

(तत् पद० श्री गणेश जी के विग्रह में गजाकार मुखाकृति 'तत्' पद [ब्रह्म] तथा नराकार धड़ 'त्वं' पद [जीव] का प्रतीक है ॥ असि सत्ता वाचक। द्र० 'देव देव आनन धर जीव ढरनि टारी' पंचक्रोश सुधा पद १ की टीका।)

ऊष कइत केरा सिंदूर रंगदार हैं
चलदल औ दूब नाग भाव के पियार हैं ३

(ऊष कइत केरा गज प्रिय। सिंदूर गज का शृंगार, एवं खाज नाशक है॥ द्र० टीका पंचक्रोश सुधा १) ॥ चलदल पीपल। नाग हाँथी ॥)

कर्मसूत्र मोदक पीतांबर जरतार हैं
आदि देव के ये नर भाव मे अचार हैं ४ २

(कर्मसूत्र जनेऊ। जरतार जरी का काम किया हुआ ॥ नर भाव में अचार है ऊपर वाले चरण में गज भाव के उपचारों को कहा गया, इसमें नर भाव के ॥)

[३]

मंगलमय गजमुख को मंगल यह ध्यान है
माथे सिंदूर लाल दूब हरित बान है १

(सिंदूर लाल दूब हरित ये सब मांगलिक वस्तु हैं ॥)

भाल चंद्र नाद बिंदु मोती सो जान है
कुंडल सी सुंड एकदंत गलित मान है २

(भालचंद्र मस्तक का चन्द्र ही 'नाद' तथा मोती विंदु के समान है। एक दंत गलित मान है एक दंतता से उनकी अभिमान हीनता प्रगट होती है ॥)

रतन मुकुट कंकण कर हार शशि समान है
पीतांबर कर्मसूत्र कमर सूत्र आन है ३

(कमर सूत्र मेखला ॥)

मद सुगंध रसिक भँवर पुंज करत गान है
पायन की पैंजन सें उठत मधुर तान है ४

अंकुस गज मान दमन सोहत पर सान है
आतम जय प्रगटत जनु गज मुष सुलतान है ५

(सुलतान परम शासक ॥)

मंत्रन में आदि मंत्र तीनि लोक मान है
देवन में आदि देव देत अभय दान है ६ ३

(आदि देव गणेश जी प्रणव स्वरूप तथा प्रणव आदि मंत्र है, अतः गणेश जी आदि देव स्वयं सिद्ध हुये ॥)

[४] ललित

यंत्र गनपति जी को बिंदु षटकोन लसै
एक महा मंडल बीस जामे दल हैं
मेखला त्रिशूल आठ तीनि अर्ध चंद्र लिषै
बिंदु षटकोन जहाँ महा मंडल हैं १
सेत जमीन पर लाली लाल रेष सब
चीन के ईंगुर से लिषै झलाझल है
मंगल चउथि जोग यामे बड़ो सुभकारी
देव गजानन देत चारिउ फल है २ ४

[५]

कृष्ना चउथि । गनपतिहि पियारी लागै
की प्रिय लागै बुध को बार
बुध बिष्नु को सरूप बिष्णु सो । नपति
छीजत चउथि कला सो तौ हंकार १
गलित गुमानता से एकदंत नाम भयो

{ यह ग्रंथ खंडित रूप मे ही प्राप्त है, परंतु प्रतीत होता है कि इसकी रचना ही ऐसी की गई है । विशेष द्र० भूमिका । }

राम सुधा

[१] भैरव

मंत्रमय गनेस बिघन हरन सदा गाइयै
प्रथम जाहि गाय गाय सकल सिद्धि पाइयै १
मंत्र को सरूप सोई गज मुख ठहराइयै
मंत्र भाग चारि भुजा भाल चंद्र ध्याइयै २

{ प्रथम पद से १५वें पद के द्वितीय चरण तक की टीका खंडित है। निम्नलिखित टिप्पणियां सम्पादक की हैं }

(**मंत्र** प्रणव ॥ **मंत्र भाग चारि** प्रणव की चारो मात्रायें श्री गणेशजी के चारो भुजाओं के तथा ललाट का चन्द्रमा चन्द्रविंदु के समान है।)

अंकुस सी दूब ग्यान रूप सो चढ़ाइयै
मद हर सिंदूर सीस मोदक फल भाइयै ३

(**अंकुस सी दूब** अंकुश तथा दूब दोनो त्रिदल होते हैं ॥ **मद हर सिंदूर** सिंदूर हाथी के मद से उत्पन्न खाज को दूर करनेवाला है। **मोदक फल** मोदक एवं फल। **भाइयै** ऐसी [उपर्युक्त प्रकार की] भावना करिये ॥)

भक्त मान एकदंत केवल सुख दाइयै
देव देव भक्तन के मानस मे आइयै ४ १

(**भक्तमान एक दंत** श्री गणेश जी की एक दंतता उनके भक्ताभिमान की सूचना देती है। वि० द्र० 'रामायण परिचर्या' 'गण नायक करिवर बदन' की व्याख्या ॥)

[२] भैरव

चीषि चीषि चसकन से राम सुधा पीजियै
राम चरित सागर मे रोम रोम भींजियै १

(**चसकन** स्नेह चषक [प्याला] से।)

राग द्वेष जग बढ़ाइ काहे को छीजियै
पर दुष कन देषत हीं आप सो पसीजियै २

तोरि तारि पैंचि पाँचि श्रुति को नहि गींजियै
जामे रस बनो रहै वही अर्थ कीजियै ३
बहुत काल संतन के दोउ चरन मीजियै
देव दिष्टि पाइ बिमल जुग जुग लौं जीजियै ४ २

[३] भैरव

कैसें धौं राम चरन उपजत अनुराग है
तनिकौ नहि होत हृदय बिषय रस बिराग है १

बिषयहि के हेतु करत जप तप व्रत जाग है
बहुत जनम कोटिन्ह को जमकि रह्यो दाग है २

ग्यानिन्ह के रगरन से प्रगट होत आग है
यामे कछु अचरज नहि माया को बाग है ३

(**ग्यानिन्ह के रगरन से** ज्ञानियों के बहस से केवल संताप ही प्राप्त होता है, शान्ति नहीं ॥)

केवल सतसंग पाय जगत देव भाग है
राम नाम रटत रटत लगत राम ताग है ४ ३

(**देव भाग** दिव्य भाग्य ॥ **राम ताग** राम से स्नेह सूत्र ॥)

[४] सोरठ

अवधि की महिमा अपरंपार
गावत हैं श्रुति चार ॥

निस्मित अचल समाधिन्ह से जो ध्याई बारंबार
ताते नाम अयोध्या गायो यह ऋगबेद प्रकार १

रजधानी परबल कंचनमय आठ चक्र नव द्वार
ताते नाम अयोध्या पावन अस यजु कहत बिचार २

अकार यकार उकार देव त्रय ध्याई जो लषि सार
ताते नाम अयोध्या ऐसो साम करत निरधार ३

जगमग कोश जहाँ अपराजित ब्रह्म देव आगार
तातें नाम अयोध्या ऐसो कहत अथर्व उदार ४ ४

('अष्टचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या । तस्यां हिरण्मयः कोशः स्वर्गो ज्योतिषा-वृतः ॥ तस्मिन्हिरण्मये कोशे त्र्यरे त्रिप्रतिष्ठिते । तस्मिन् यद्यक्षमात्मन्वत्तद्वै ब्रह्म विदो विदुः ॥ प्रभ्राजमानां हरिणीं यशसा सम्परीवृताम् । पुरीं हिरण्मयीम् ब्रह्माऽऽविवेशा—पराजिताम्'—अथर्व वेद संहिता दशमकांड प्रथम अनुवाक् द्वितीय सूक्त मंत्र २८—३३ ॥)

[५] सोरठ

झलकि रही श्रुति सी सरयू माय ॥
ब्रह्मोत्तर मानस तें निसरी मिली अवधि से आय १
स्वच्छ बरन पद क्रम सुर जाके अंग रहे हरषाय
जो ब्राह्मण को जीवन धन है जहँ बिहरत रघुराय २

(श्रुति सी सरजू सरयू की उपमा श्रुति से ॥ स्वच्छ बरन पद क्रम० वेद स्वच्छ, वर्ण, पद, क्रम एवं स्वरयुक्त हैं उसी तरह सरयू भी ॥ जहँ बिहरत रघुराय सरयू एवं वेद दोनो भगवान रामचंद्र के विहार स्थल ॥)

सुचिता कर्म मिठास भक्ति है धारा ग्यान सोहाय
कांड सच्चिदानंद रूप जनु प्रगटे अवसर पाय ३

(सुचिता कर्म० सरयू के जल की पवित्रता, कर्मकाण्ड, मधुरता भक्ति, एवं तीव्र धार ही ज्ञान है ॥)

जाके दरस परस ते बाढ़ै रघुबर भक्ति अमाय
जाके तीर देव मुनि मानस बसे रेणु मिस छाय ४ ५

(अमाय निश्छल ॥)

[६]

अवधि के संतन की बलिहार
त्रिभुवन के सिंगार ॥

निगमागम पुरान स्मृति संमत करि चारिउ उपचार
प्रति दिन रामचंद्र पद अरचत परम भक्ति अनुसार १
(निगमागम० निगम-वेद, आगम-तंत्र, पुराण एवं स्मृति इन चारों मे कहे गये उपचारों से ॥)

भाव तिलक माला को समुझत परि हरि हृदय बिकार
नाना मत कहँ एक जानिकै जीति रहे संसार २
अरचत चरचत परचत षरचत परमारथ ब्यवहार
एहि बिधि उत्तम काल बितावत चिंतत राम उदार ३
जिनके हृदय बदन कमलन मे राम भँवर गुंजार
देव धरम एकै दिढ राजत केवल पर उपकार ४ ६
(हृदय बदन हृदय तथा मुख दोनो मे ॥)

[७] *बसंत/हिंडोल*

राम सरूप अवधि निजु जानौ आदि शक्ति सरयू लहराय
इन दोउन को या कोसल मे नित बिहार लषि मन हरषाय
अवधिहि मे प्रभु प्रगट भये हैं अवधिहि मे पुनि रहे समाय
इन चरितन से देव अवधि दोउ एक रूप एतनोइ ठहराय ७

[८]

कवनिउँ जोनि अवधि जौ पावै तौ यह जीव कृतारथ होय
नाहि तौ ब्रह्मलोक पाइउ कै गिरिहै बहि बहि मरिहै रोय
अवधिहि पाइ तजत हैं जे तिन्ह कर गत निज हित डारेउ षोय
राम देव के चरन सरन मे सब तजि सुष से रहियै सोय ८

[९]

लाल गुलाल सुमन जहँ महकत ऐसी सुभग अवधि की बाग
डार डार औ पात पात मे उमगत राम चरन अनुराग
चारिउ फल नेवछावरि कीजै जाके फलन के अधिक सोहाग
राम देव जामे नित विहरत ते निरपँहि जिनके बड भाग ९

[१०]

संतन के मंदिर मंदिर मे नित मंगल नित होत उछाह
जन्म महोत्सव सुष देषन की देवहु के मन उपजत चाह
प्रभु पद रति की अवधि सुगति की अगतिनहूँ को करत निबाह
सब की अवधि अवधि पै याकी महिमा निरवधि परम अगाह १०

[११]

धन्य अवधि की धरती पावनि पग पग मे जहँ लोटरत याग
रामचंद्र पायन के मषमल सुनि सुनि उर उपजत अनुराग
तीरथ देवौ ठाँव ठाव के इहाँ बसे लषि अचल सोहाग
पुरी सिरोमणि अवधि जानिकै अब याही से लागउ लाग ११

[१२]

परम सुशील अवधि के बासी जिन्हके बचन सुधा रस भरे
राम कथा पर जिन्हहि प्रेम अति छाप तिलक सुचि माल धरे
अपने अपने धर्म करत सब संतति संपति सुफल फरे
इष्टदेव रघुपति हैं तेहिते दूनौ लोक सुढार ढरे १२

[१३]

अवधि समीप रुचिर बन सोहै बन बासिन को परम अधार
लताकुंज घन जहँ एकंत मन ध्यान धरँहि मुनि त्यागि विकार
अति सुंदर सरसी सर तरिवर जे जानत केवल उपकार
पसु पंछिन से डार पात से निसरत रामहि को उदगार १
प्रभु पद अंकित अवधि पुरी को रज कब अंगन लागैगो
संतन की महिमा सुनि सुनि कै कब मेरो मन पागैगो

गुरु देव सयन से सैन सहित कब बिषरि मोह दल भागैगो
राम रूप झलकावन मति मे सुद्ध ग्यान कब जागैगो १३

[१४]

परम अमृत पायस जो आवा सो प्रभु के आवन को द्वार
याही को मुनि त्रिष्नु कहत हैं याही को मानत ओंकार
उभय जोग तें जीव चराचर होत इहाँ नहि तौन प्रकार
यामे जो रहस्य कछु निसरै ताको सज्जन करहि बिचार
प्रथम अर्द्ध कौसिल्यहि दीन्हा सो पूरण अनुपम करतार
अपर अर्द्ध जूठनि तब बनिगौ स्वामी सेवक भाव उदार

{ यहाँ से टीका की 'क' प्रति प्रारम्भ होती है }

प्रथम अर्ध कि सबसे पहिले उहै बिंबी [ब्रह्म] रहा (और) आपुइ जैसे (जो दूसरा) भाग भया उहै प्रतिबिंब (जीवरूप) ॥ **जूठन** सेवक कै भाग ॥

बिंदु मकार एक से जानहु चाहतहँहि दोऊ आधार
पंचम देव सबन मे पैलै निज निज अंसन के अनुसार १४

बिंदु मकार 'म्' [मकार] अकार बिना न कहाई। औ बिंदुऔ कै नाद आदि बिना उच्चार (असंभव) ॥ **पंचमदेव सबन मे** एक अंस ठहरे अंसी (स्वयं सिद्ध), जैसे कर चरनादि अंगन कै मालिक अंगी ॥ १४ ॥

[१५]

पराभक्ति कौसल्या जननी तहाँ भयो प्रभु को अवतार
बिंदु रूप अस तपन कहत हैं प्रभु सरूप तौ अकथ अपार

यहि पद को अर्थ (आगे 'नामकरण' के) मंगल प्रसंग (पद सं० २१) में ॥
{ तपन 'रामतापिनीयोपनिषद' }

परब्रह्म जाको गुन है केहि गनती मे तब ओंकार
देव नाम मंगल प्रसंग मे याको सब कहिहौं बिस्तार १५

[१६]

मंगलमय प्रभु जन्म समय मे अति उत्तम दश जोग परे
अपने अपने नाम सदृश फल दसौ जनावत षरे षरे ॥

दस (भाव यह कि जो) दिसि व्यापा सो (विराट्) अवतार लेइ है ॥ **षरे** चोखे ॥

ऋतु पति ऋतु पुनि आदि मास मधु शुक्क पक्ष नित धर्म भरे
अंक अवधि नवमी शशिबासर नषत पुनर्बसु प्रकृति चरे ॥

{उपर्युक्त 'दसो जोग'—मास पक्ष आदि—के धर्म भगवान मे भी घट रहे हैं:—}

ऋतुपति सब के ए [भगवान रामचंद्र] पति। **आदिमास** आदिउ सब कारनन के। **शुक्लपक्ष** दूनो पक्ष [मातृ औ पितृ कुल] जेहि का सुक्क—सफा है। **धर्म** सपेद ॥

अंक अवधि नवमी नौ के आगे अंक नाही; एहू सबके हद { 'पुरुषान्न परं किञ्चित्' }। **शशिबासर** चंद्रवार; राम चंद्र हैं। जेहि मन के सब ताबे सोऊ जेके (बस) { क्योंकि—'चन्द्रमा मनसो जातः' }। **नषत पुनर्बसु** रामायन परिचरजा औ[1] विवृति मे साफ लिखा—('पुनः', 'वसु') फेर भगवान गर्भ मे बसे। वा, देवतन की गई ('बसु') संपत्ति ('पुनः') फेर मिली। **प्रकृति चरे** (पुनर्वसु तथा चन्द्रवार का) फल चर [संचरणशील] है। एसे विश्वामित्र (के) साथ जाए से लेइ दंडकारन्यादि (पर्यंत) फिरब। महाराजाधिराजौ भए पुरानांतर मे फेर लंका जाब (ख्यात) ॥

जोग सुकर्म समय मध्यंदिन रबि प्रताप जहँ अति पसरे
जयदाता अभिजित मुहूर्त्त बर परम उच्च ग्रह पाँच ढरे ॥

जोग सुकर्म सुंदरै काम करै का जोग। **समय मध्यंदिन** सम [समता सूचक]। **रबि प्रताप** रामौ प्रताप सूचक ॥

जयदाता अभिजित नामार्थैं अस फलौ। **परम उच्च ग्रह पाँच** 'कृष्नसुधा', (पद १९) मे श्रीकृष्न नाम (को) नाम, रूप, लीला, गुन, धाम (इन पाँचो से युक्त बतलाया गया है। भगवान राम मे इन पाँचो के) उच्च होये के हेतु ('परम उच्च ग्रह पाँच') लिखा 'श्यामसुधा' ॥

नवमि पुनर्बसु परम उच्च रबि कबहुँ न तीनिउँ संग अरे
एहि ते देव रूप कछु लषियै गाय गाय गुन पतित तरे　१६

१—क मे 'औ' काटकर, 'के' लिखा है परन्तु वह भ्रामक है।

नवमि पुनर्बसु० { ('भगवत्प्रादुर्भावपरमानंदेन मासमात्रं रव्यादिग्रहगतिरवरुद्धा । तेनायं योगः सिद्धः सकृदेव, न भूतपूर्वो न पुनर्भविष्यति' द्रष्टव्य 'रामायण व्याख्यान परिशिष्ट') } ॥१६॥

[१७]

कोसलेश दसरथ के द्वारे
गह गह नौबत झरन लगी
झाँगड़्झाँगड़् झाँगड़्झाँगड़् घड़्घड़् धां घड़्घड़् धां
घड़्घड़् धां धमकैं परन लगी

गह गह घनी ॥ झाँगड़्० छोटे नगारा जीर कै (शब्द) जेके आनक कहै हैं औ धां बडे बंब दुंदुभी कै शब्द ॥

तत्तथेइ थेइ ताथेइ ताथेइ
जहँ तहँ गनिका करन लगी
तेहि समाज की छबि देवहु के
तन मन धन को हरन लगी १७

तत्तथेइ नाच कै तोड़ा ॥ तन मन धन तन औ मन औ धन, वा, तन का जो मन धन है ॥ १७ ॥

[१८]

प्रभु अवतार होत त्रिभुवन मे झमकि रह्यो है मंगल चार
रावन चित्रा रवि अथये को भा सबके मन मोद अपार

प्रभु अवतार० ❀ ❀ ❀ ॥ चित्रा रवि अति तीछन ॥

रंभा सी रंभा निरतत है करत असोक असोक पुकार
रावन ग्रह पीडित देवन की बंदि निवारत बंदनिवार १८

रंभा केरा औ अप्सरा ॥ बंदि निवारत० (वंदनिवार का) जथार्थ इहै नाँव ॥१८॥

[१९]

प्रथम भक्ति ग्यान मनो
केकई कुमार जनो
सुभग पुष्य नपत सनो
मीन लगन पायकै

प्रथमभक्ति साधन (भक्ति) { जो ज्ञान को जन्म देती है } । **मीनलगन** थोर राति रहे । { मेष संक्राति मे सूर्योदय मेष में होता है—उससे पूर्व मीन } ॥

बिद्या ज्यों बोध बिनय
सुमिता त्यों दोय तनय
सर्प नषत बृश्चिक मे
राजत जनमाय कै

बोध जथार्थं बुझाव । **बिनय** नवनि । **सुमिता** सुमित्रा । **सर्प नषत** स्लेपा नक्षत्र { आश्लेषा के देवता सर्प है, अतः तद्दैवत्य नक्षत्र 'सर्पनषत' } ई [लक्ष्मण जी भी] शेष [सर्प] हैं । **बृश्चिक** अग्नि दैवत—परम तेजस्वी । सुदरशनै (चक्र के अवतार, जो) सत्रुघ्न नामै से (स्पष्ट) ॥

प्रणव भयो चार भाग
जीवन को भाग जाग
बाढत रामानुराग
बार बार गायकै

प्रणव भयो चार भाग (राम-) तापिनीय में लिखा । **बार बार गायकै** रामचरित ॥

याको रस महादेव
जानत हैं सकल भेव
मौन भये तेऊ जस
गूँगो गुड पायकै १६

महादेव० मौन भये तौ (अन्य) के कहि सकै ? 'रस' औ 'भेव' मे भेदाभेद अन्वय ॥ १६ ॥

[२०]

नाम करन गुरु आप कियो है क्षत्रिन्ह को अधिकार नही
नाम ब्रह्म उपदेश प्रथम है सो केवल बिप्रहि से चही

नाम करन० ❀ ❀ ❀ ॥ बिप्रहि से चही हेतु—प्रोहितै (का) गोत्र वेद (यजमान का भी) ॥

हिरण्यनाभ अस नषत नाम भौ परमारथ मे राम सही
राम नाम के गुन कछु बरनौ जसि उपनिषदन राह कही २०

हिरण्यनाभ० पुनर्वसु कै चउथा चरन ('ही') कर्क रासि ॥ २० ॥

[२१]

महा मंत्र श्री राम नाम सब राम चरित्र लषावत है
लौकिक बैदिक अर्थ जहाँ लौं तिनहूँ को दरसावत है ॥

महामंत्र जैसे (कि) तापिनीय मे लिखा, औ तंत्रन मे (भी) ॥ लौकिक बैदिक रकारै मकार से सब औ सब मे (रकारै मकार) ॥

राकारादि मकारादिक पद जोरत हीं मन भावत है
जैसे राजत महि मंडल मे ताते राम कहावत है ॥

राकारादि ❀ ❀ ❀ ॥ जैसे राजत० तापिनीय श्रुत्यर्थ— { 'चिन्मयेऽस्मिन्महाविष्णौ जाते दशरथे हरौ। रघोः कुलेऽखिलं राति राजते यो महिस्थितः' ॥ राम तापिनीय० १।१ ॥ }

रावन राज मथन इत्यादिक चरित समूह जगावत है
अर्थ निधान भयो याही ते महिमा बेद बढ़ावत है ॥

रावन राज मथन० दूसरे (मन्त्र) कै अर्थ { 'रावण-मरणं वा यस्मादित्यादयः श्रुत्युक्ता अर्थाः वेदितव्याः' वाल्मीकि० १।१८।२१ की रामायण व्याख्यान परिशिष्ट टीका } निधान खानि ॥

जो निर्गुन सो गुन है याको समुझत समुझत आवत है
श्रुतियौ पुरुष पदै से जहँ तहँ देव रूप झलकावत है २१

जो निर्गुन सो गुन० आगे यहि (ग्रंथ) में (तथा श्री स्वामी जी कृत) औरौ ग्रंथन में भी { जैसे—'निरगुन औ सगुन रूप इनमें नहि भेद है...' इत्यादि } ॥

श्रुतियौ पुरुष पदै से० 'ब्रह्म' नपुंसक शब्द ॥ २१ ॥

[२२]

भासि रह्यो जो अपनी भा तें तामे रत ये सतत रहे
गुरु बसिष्ट यह कारन गुनि कै कैकेई सुत भरत कहे ॥

{ इस पद की टीका खण्डित है। निम्नांकित टिप्पणियाँ सम्पादक की हैं। }

(भासि रह्यौ जो० श्री रामचन्द्र)

गौर अंग सब औ गर्भहि से सीस चँदोला लच्म गहे
ताते नाम कियो लच्मण अस सिर पर धरती भार बहे ॥

(लच्म चिह्न—'लच्म चिह्नं तदस्यास्तीत्यर्थः'—रामायण व्याख्यान परिशिष्ट)

मोह शून्य भय शून्य काल त्रय अशुचि शून्य लछमन मुरहे
तीनि शून्य से सहसशीर्षता यामे कछु न प्रमान चहे ॥
देषि सुदर्शन रूप कह्यो गुरु नाम शत्रुहन शत्रु दहे
देव रतन चारिउ सुत दशरथ मानहु सुकृत समुद्र महे २२

{ मुरहे गण्डान्त (जो लोक मे मूल नाम से विख्यात है) मे उत्पन्न अथवा नटखट, द्र०—'हिन्दी शब्दसागर' }

[२३]

जनक राय के मंदिर आई आदि शक्ति जग तारन माय
जगमग जोति जगै दीपक सी कोमल ललित कमल से पाँय ॥

आदि शक्ति 'भू' सत्ता। जगतारन माय ('तारन' अवतरण—उत्पन्न—करने वाली) अर्थात् सबकी मूल कारन जननी। वा, (जग-तारन) 'माय' माया, पै बाँधे वाली नाहीं (तारने वाली) ॥

०जोति जगै० जोगिन के ध्यान वारी। कोमल-नरम। ललित सोभित, सुरंग ॥

फागुन कृष्न सत्तमी भृगुदिन अनुराधा ध्रुव लगनौ गाय
मातु भूमि तें प्रगट भई हैं रहा जगत मे मंगल छाय ॥

फागुन कृष्न० फागुन वदी सतमी, सुक्रवार, अनुराधा नच्त्र, ध्रुव जोग। गाय [गो] वृष लगन ॥

मातु भूमि ते० यह सबकी जननी (अतः) भूमिहि माता से (उत्पन्न)। रहा जगत में मंगल कि अब सबकी पीर इनहीं से दूरि होई ॥

सीता हल रेषा को कहियै जेहि रेषा से सीर लषाय
तेहि रेषा से निसरीं कन्या ताते सीता नाम कहाय ॥

सीता हल रेखा० { सीता लाङ्गलपद्धतिः—अमरकोष } ॥

सीता नाम० हलरेषा औ सप्तमी (के संबंध से, जो कि) विवृति औ रामायन परिचर्या में भले ॥

देव शक्ति गंगा औ कमला ई तीनिउँ सिय मे ठहराय
जन्म मास भादौं औ माधव भले लोग गावत अर्थाय　२३

देव शक्ति० ❀❀❀ ॥ माधव वैसाख । भले लोग० { क्योंकि श्री सीता जी, गंगा जी तथा श्री कमलाजी का आविर्भाव, क्रमशः फाल्गुन, वैशाष एवं भाद्रपद मास की सप्तमी ही को हुआ है } ॥२३॥

[२४]　　अलैया

कोसलेस डाँवरो
गोरो एक साँवरो
देषि आवै ताँवरो
मुनि संग जात हैं ॥

डाँवरो लरिका बुंदेल खण्ड की भाषा ॥

बयस किसोर नई
सषि न चपलता गई
बात अजुगुत भई
दल फल पात हैं ॥

दल साकादि ॥

छोटे छोटे धनु सर
लसत दोउन्ह कर
आगे पाछे पदचर
अति मृदु गात हैं ॥

मुनि देव धर्माचार
खल तहँ बिघ्नकार
ये ताके रखवार
एतो ठहरात है २४

मुनि देव धर्माचार मुनि (लोग) देव के धर्म [यज्ञादि के] करैया, राक्षस (उसके) विरोधी ॥ **ताके रखवार** धर्म के ॥ २४ ॥

[२५] धनासिरी

रघुपति यह डाइनि आवत है
कहँ मुनि भय उपजावत है ॥

नाम ताडका बडी पाप रुचि बनचारिन संतावत है
याको सुत नास्तिक षषंडयुत मष मे धूम मचावत है ॥

डाइनि निसाचरि । **नाम ताडका०** ('तालमात्रा' ताड़ वृक्ष के समान होने से—रामायण व्याख्यान परि० १।३०।१५)

बाघ सिंघ नर खूल पोइकै पापिनि इत उत धावत है
मनहु उठी बागर की आँधी ऐसी धूरि उडावत है ॥

बागर मडवार देस मे ॥

नारि जानि करुना जिनि करियै याको बध मोहि भावत है
हतहु बेगि संध्या नगिचानी साँझि भये बल पावत है ॥

नारि जानि नारि अवध्य । **याको बध०** ऐसी पापिनि, औ जेके वंसो नीक नाही ॥ **साँझि भये बल०** निसाचर जात [जाति] प्रदोस भये प्रबल ॥

एक बान उर तकि तब मारा मरतहुँ भूमि कँपावत है
देव लोक सो चली देह तजि राम सुजस सोउ गावत है २५

भूमि कँपावत है बड़े डील औ शब्द से ॥ **देवलोक सो चली०**—फेरि जक्षिणी भई { ताड़का अपने पूर्व जन्म में यक्षिणी ही थी बाल्मीकि० १।२६।२१ } ॥२५॥

[२६]　　　　　अलैया

जाग करन लागे
मुनि जन अनुरागे
सुभुज सदल जागे
परी लराई है ॥

भुज-बाहु [सुभुज =सुबाहु] ॥

राम एक सर डारो
ताही से सुभुज जारो
लषन दल सँघारो
साथरी चलाई है ॥

एक सर अग्नि अस्त्र । साथरी तोरन की पंक्ति ॥

राम तुक्का चलायो
तेहि मारीच उडायो
लेइ लंका मे गिरायो
बड़ी फुरताई है ॥

तुक्का बेफल (का बाण) । बड़ी फुरताई पृथ्वी में न गिरै दिए ॥

मुनि सब हरषे
देव फूल बरषे
राम रूप परषे
सुमति थिराई है ॥　२६

राम रूप परषे (कि ये) साधारन नाहीं । वा, राजकुमार बाल मे यतना पुरुषार्थ ! ई कहैं ॥ सुमति थिराई है बूझै बुद्धि ठेकाने ॥ २६ ॥

[२७]

एतो बडो मुनि ग्यानी　　जाय नृप सुत आनी
श्रौत बितान तानी　　अस झलकावत ॥
कर्म बिनु ग्यान कथा　　स्नेह बिनु दीप यथा
दूनो की गँथी गँथा　　भये फल पावत ॥

श्रौत बितान वैदिक चन्दवा, भाव, कर्म धर्म के छाहँ तरे ॥

कर्म बिनु ग्यान कथा० जद्यपि तम-अविद्या (का) नास करैया ज्ञानदीप (का) टेम, पै कर्म (रूप) स्नेह तेल विना (व्यर्थ); (अतः) दूनौ की गँथी गँथा (दोनों) मिले अन्योन्याश्रय (रूप से), फल तम नासव ॥

कर्म ग्यान को जगावै ग्यान तमको नसावै
कर्म बिनु बूझि जावै ज्ञान तम छावत ॥

याही तें करम ग्यान संग जब लगि प्रान
तजे धरि अभिमान पतित कहावत ॥ २७

कर्म ग्यान को जगावै तौ परम्परा करि मीमांसकन की रीति मोक्ष साधै वाला कर्मौ सब मत से ठहरत। ऐसे अच्छा काम करि मन थिराय ज्ञान जगी। **ग्यान तमको नसावै** अज्ञान नास उहै करी ॥ **ज्ञान तम छावत** जौ राम सनेह न रही फिर अन्त कर्म, वा कर्म-हीन भए उहै ज्ञान, तम-रूप होइ नसाई ॥

करम ग्यान संग० ईसावास्य उपनिषध में लिखा है—'जब तक जीवो कर्म करो' { कुर्वन्नेवेह कर्माणि० २ } ॥

तजे धरि अभिमान पतित० हम ज्ञानी (हैं), हमै कर्म (से) का ? ई अभिमान धरि (कर्म) छोड़े (मनुष्य) पतित (होता है); हेतु,:—जहाँ ज्ञान की (प्राप्ति) वहि भूमिका (पर) पहुँचे फेर कर्मादि (का दोष) नाहीं; (यह जो) लिखा, से आपै ऊ [ज्ञानी-परम हंस की] दसा भए अध्यास न रहे, आपै सब भूली, ('त्यागना' नहीं पड़ेगा) तेसे 'तजे' पद धरा ॥ २७ ॥

[२८] काफी

असि जडता निर्मूल करै को ॥
जसि जडता पाई मुनि नारिहि थाहि सँवारन को उभरै को ॥

जडता चैतन्य विरोधी ॥

महा घोर पति शाप अनल में मूढ सलभ सो जाय जरै को
श्रुतिहु उपाय कहत जहँ हारी तहँ बरबस सिर बिपति बरै को ॥

महा घोर पति शाप० और पापन कै (तो) प्रायश्चित्तौ होय। **सलभ** पाँखी ॥ **श्रुतिहु उपाय** ❀ ❀ ❀। **बरै** लेब ॥

पाथर तें नर तनु पावन कों कोटिन्ह जन्म सुकर्म चरै को
तऊ अहिल्या तनु तौ दुर्लभ एहि अघटित मे बृथा परै को ॥

पाथर तें नर तनु० बहुत सुकृतन कै फल नरदेह, सो (तभी संभव, जीव) घूमत (घूमत) उन (अन्यान्य) जोनि ले (होकर) जब (मनुष्य योनि तक) पहुँचै। (पर इन योनियों को पार करना तो चेतन द्वारा ही सम्भव) जड़ पाथर से तौ सदा असंभौ ॥ 'हल्य' कुरुपता { अहल्या निर्दोष, अनवद्य } ॥

वही रूप वही ग्यान वहै सब मन मति कँह जड बीच फरै को
केवल राम चरण रज समरथ तेहि बिनु दूसर देव ढरै को २८

[२९] अलैया

नाद बिंदु सीता राम एक गोरी एक स्याम
छबि गुन धाम दोऊ मिलेइ मिलाये हैं
पाइकै सुमन बाग दोऊ ओर भाव जाग
साचो अनुराग तब दोउन बढ़ाये हैं

नाद सर्वादि; जेहि से प्रणौ औ वेद सब फैला, औ वही मे उपसंघारौ। व्यास भगवानौ वेद-जननी जे के मानत। द्रव्य गुण विचारी, औ जो परमाणु रूप (के) नित्त मनैया (वे) जैसे (मानते हैं कि) आकासै से—औ आकासै मे—सब। द्रव्य गुणन मे होय आकास मे लै [लय] होत है—तौ आकास कै परमाण रूप का ठहरी ? (इसी प्रकार) जो नित्त शब्दै सोई नाद। और (विशेष) परिचर्यादि में लिखा।

बिंदु तन्त्रन से जाहिर; (जो) सबके ऊपर, नादाधार से जो न उचार होवै वाली मात्रा जनात। तापिनीय आदि मे लिखा—'सबकै आदि अन्त'। **एक गोरी** सुद्ध सत्व। **स्याम** अलख (किंतु) सुदरस। **धाम** ठाँव ॥ **दोऊ मिलेइ०** भेद नाही ॥

बाग बगैचा औ बानी; अर्थात् फुलवारी मे वा देवतन की बानी से ॥

रुद्र धनु प्रतिबंध जेहि किये नृप अंध
गुरु को सुगंध लेइ राम भँगराये हैं
वर वधू मिलि गये सबहि अनँद भये
सुष नित नये देव दुंदुभी बजाये हैं २९

रुद्र धनु पिनाक। **प्रतिबंध** अटक। **नृप अंध** जथार्थ रूप न लखे। **भँगराये हैं** भंग किए ॥ **बर** जथार्थ इहैं { 'वर' शब्दार्थ यथार्थ यहीं चरितार्थ } ॥ २९ ॥

[३०] धनाश्री

मनहि मन भृगुपति करत विचार
मारुत को अवतार ॥
तैजस चक्र सुदर्शन को मै कीन्हो गरब प्रहार
सब भूपति मोहि देषत काँपहि दबत न नान्हक वार ॥

मारुत को अवतार रामावतार होतै (परशुराम में) पवनांसै [पौनांसै] (शेष) रहा ॥ तैजस चक्र० चक्रावतार अर्जुन [कार्तवीर्य] ॥

गति सर्वत्र अषंडित मोरी मै हौं प्रबल जुझार
साँप पवन ज्यों तेज हमारो अँचवत गोर कुमार ॥
आपन धनु आगे करि बोले याको पैंचु गरार
होइ गयो धनु सगुन आपु से सगुन ब्रह्म अनुसार ॥

गरार अभिमानी ॥

लाज भई अस्तुति अति कीन्ही पहिचाना करतार
तप धन दंड देइ बन गवने कहि जय देव उदार ३०

[३१] काफी

प्रीति अलौकिक राम सिया की ॥
कहि न जाय मन ही मन भावै जहाँ नही गति जंतु जिया की ॥

अलौकिक साधारन के आन (भिन्न) तरह ॥ जंतु साधारन 'जीव' विशेष ॥

यह हिय वा हिय से सब बोलत वह हिय यासें कहत हिया की
दोउ हिय मे पश्यंती प्रगटी चलनि न मध्यम बैषरिया की ॥

(यह हिय वा हिय० द्र०—'अन्तर्गतमभिव्यक्तमाख्याति हृदयं हृदा' की 'रामायण व्याख्यान परिशिष्ट' टीका 'प्रेम्णः परोयमवधिर्यत्पश्यंत्या हृदयं जानीयात्' ॥)

पश्यंती परा औ मध्यमा के बीच में। **मध्यम** विशेष देवतन कै जहाँ से सुर उठत। **वैषरी** जे से सामान्य लोग बोलत। **चलनि** गति; मध्यमौ कै (गति) नाही तौ कैसे कहि सकै ॥

कहे सुने देषे से जग मे होत भाव गति पुरुष तिया की
गुन धन रूप तीनि से उपजै औ बिनसै रति सो बिषिया की ॥

कहे सुने० काव्यादि मे (प्रसिद्ध) ॥ गुन धन रूप० प्राकृत (कारण) ॥

झूठी प्रीति भूमि गंधौ की मिटत अंत मे जसि बनियाँ की
परमारथ सिय राम देव की प्रीति एक रस नहि दुतिया की ३१

इति बाल कांड

झूठी प्रीति भूमि गंधौ की द्रव्यौ गुण लै ॥ परमारथ 'अरथ' माया लै 'परम' एहू से विशेष। एकरस हेतु रहित, जो नाहीं बदलत। नहि दुतिया की और मे ऐसन नाही; वा, (जहाँ) दुसरे कै गतिहि नाहीं रहत ॥ ३१ ॥

इति बाल कांड

[३२] धनाश्री

भरत से डर कछु भूपहि रही ॥
नाहि तौ भरत गये ननिअउरे अस कस गुरु सन कही ॥

अथ अयोध्या कांड

भरत से डर जो कैकई विवाह में निबन्ध किये ॥

नाहितौ भरत गये० वालमीकीय श्रीमद्रामायन मे लिखा (२।४।२५—२८)॥

अपने भावहि के बिगरे तें होत उपाधि सही
तव देवनहूँ अवसर पावा बानी जाय गही ॥

अपने भावहि के० श्रुति मे लिखा—'ब्रह्म भाव करै ब्रह्म हो, भूत भाव करै भूत होय'। खुलासा (यह कि) नीक गत भावै; जैसन करै तैसन होय ॥ बानी सरस्वती ॥

एक राह भारतिहु बिचारी बहुत बिषाद दही
राजा राम सदा से न इन्हहि युवराजता चही ॥

एक राह० { तत्र सरस्वती विघ्नकार } ॥ राजा राम० { 'श्री रामचन्द्रः सर्वदा सर्वेषां शास्तेव' रामायण व्याख्यान परिशिष्ट अयोध्या कांड प्रथम सर्ग } ॥

याही को फल अनरथ प्रगटा रावन के सिर ठही
देव लोक को कंटक भानो छावा मंगल मही १

याही को फल अनरथ० रामायन परिचरजा–'विघन मनावहिं देव कुचाली' यहि के व्याख्या मे भले लिखा ॥

देवलोक को कंटक जो रावन सबके गडत रहा। भानो टूट्यो ॥ १ ॥

[३३] झँझवटी

मुनि का मन मे ठहराया
सदल भरत पहुँनाया ॥

राम गये बन पिता मरन भा सुनत भरत बउराया
धर्म बिरोध जनहु मे निंदित ताहू पर फुरमाया ॥

मुनि का मन { शंका } राम गये ❀ ❀ ❀ धर्म बिरोध ❀ ❀ ❀

मुनि कौतुक मोहित सब बोलहि आजु जन्म फल पावा
अवधि न जाब न जाब राम पहँ हम इहँवै घर छाया ॥

मुनि कौतुक ❀ ❀ ❀ अवधि न जाब ❀ ❀ ❀

रिद्धि सिद्धि संपति समाज सुष भरतहिं नाहि सोहाया
ज्यौं त्यौं राति बिताइ प्रात उठि मुनि चरनन्ह सिर नाया ॥

रिद्धि सिद्धि ❀ ❀ ❀ ज्यौं त्यौं राति ❀ ❀ ❀

देव सुषौ जेहि कँह नहि भावै तेहि कि राज सुष भाया
अनरथ मे न भरत संमत कछु एतनै अर्थ देषाया २

देव सुष दिव्यौ भोग जेहि के न रुचा (उसे) का प्राकृत तुच्छ (सुख) ? { 'योऽयं भरतः दिव्येषु भोगेष्वपि अनासक्तः...' द्र०—रामायण व्याख्यान परिशिष्ट } ॥ २ ॥

[३४] झँझवटी

पथ में को तापस यह आवा
सुंदर किये बनावा ॥

राम सरिस लघु बयस मनोहर अनुचित पद सिरु नावा ॥

पथ मे को तापस { 'रामचरित मानस', अयोध्या कांड के प्रसिद्ध 'तापस प्रसंग' की विवेचना इस पद मे है } ॥ सरिस बरोबर ॥

सुत सम जानि असीस दीन्ह सिय लछमन अंक लगावा
यह नातो न बुझाइ तासु पुनि गमन न काँहूँ गावा ॥
रावन बध संकल्प आइकै भल तेंहि चेत धरावा
एहि नाते सीता कर सुत सो रामहि माह बसावा ॥

(ऊपर शका हुई, अब समाधान ।) संकल्प 'प्रतिज्ञा; भाव, रूपधारी' (संकल्प)। भल तेंहि चेत० जो ब्रह्मादि के अभय करि कहे हैं—('जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा...')॥ रामहि माह० ईश्वर संकल्प सिद्धै भए पर मुनिन जाना ॥

कामहि की अनुहारि होत सब श्रुति अस डंक बजावा
देव चरित मन बचन अगोचर अलषहिं कौन लषावा ३

कामहि की अनुहारि० रामायन परिचरजा ('राम सप्रेम पुलकि उर लावा' अयो० १११।१ की) व्याख्या मे 'ब्रह्म सू' काम कै नाव (ऐसा लिखा) ॥ ३ ॥

[३५] धनाश्री

भरत न कैसेउँ राज चहा ॥
यद्यपि कैकेइहि बर जाँचा मनु ऐसेन को त्याग कहा ॥

भरत न कैसेउँ ❀ ❀ ❀ मनु ऐसेन० ❀ ❀ ❀

तब रघुबीर बिचारा भूपति युबराजै पद दीन्ह अहा
भूप अछत या मोरे आछत सो पद लेत न दोष रहा ॥

अहा रहा; (यह प्रयोग) भूत (काल) मे (होता है) जैसे 'अहै' वर्तमान मे ॥

आपन प्रतिनिधि दीन्ह षराऊँ तब दूनौ निबहा
राज न लेहु होहु युबराजा यह मत भरत गहा ॥

तब दूनौ निबह। [2]रामचरन परिचरजा के विवृत मे भले[2] ? { 'रामस्य वने वासः सिद्धः, पादुका रूपेण ज्यायसि भ्रातरि राज्यं प्रशासति भरतस्य यौवराज्यं चसिद्धम्...' रामायण व्याख्यान परिशिष्ट } ॥ राजन लेहु० ❀ ❀ ❀ ॥

भरत रहनि से लागि गयो है दोष जहाँ को तहाँ
देव चरित यह सबहीं जाना साचो न्याव थहा ४

इति अयोध्या कांड

१—इस भावको स्पष्ट करने के लिये टीका मे—'तपसी आवै के व्याख्या देख के लिखब' इतना लिखकर छेक दिया गया है ।

२—इस स्थल पर त्रुटि चिह्न लगाकर—ख मे रामायण परिचर्या का यह अंश पार्श्व पर उद्धृत है, मूल 'भरत मुदित अवलम्ब लहेते' अर्थ-ते दूनौ खराऊँ 'अवलम्ब' आधार 'लहे' पाये मुदित भये । मूल 'अस सुख जस सिय राम रहेते' अर्थ—एहिते खराऊँ के दच्छिण बाम भाग के बरनन । खराऊँ राजा, भरत युबराजे रहे ।

देव चरित इन सब उपाधि के कारन, स्वारथ बस देवतै ठहरे, भरतादि जे कलंकी होत रहे ते बचे ॥ ४ ॥

इति अयोध्या कांड

[३६] झँझवटी

सो का जयंत गुन जाना
जो बनिगौ काग मलाना ॥

दिव्य देह पुनि इंद्र दुलारो आपौ इंद्र समाना
यह पंछिन मे अधम जाहि छुइ सुमति करहिं अस्नाना १

{ अथ अरण्य कांड }

आपौ इंद्र समाना दिव्य जोनि, (क्योंकि) आत्मै पुत्र ॥
० अधम जाहि छुइ एसे मलान ॥

महा मोह को रूप काग है सबसे बहुत सयाना
इंद्रजाल याके अंगन में रुद्रहु के मन माना २

महा मोह को रूप० 'महा मोह को रूप काग है' तेहि से—बहुत सयाना ॥ इंद्र जाल याके ❀ ❀ ❀ । रुद्रहु के मन माना कि तन्त्रौ मे लिखे ॥

सगुन कहै धर्मौ को पालक जाहि नित्य बलिदाना
राम तेज बल परिषन कारन आयो कला निधाना ३

धर्मौ को पालक भारतादि इतिहास पुरानादि (तथा) 'बसन्त राजादि' तन्त्रौ मे लिखा । जाहि नित्य बलिदाना { जैसे—बलि वैश्वदेव प्रकरण मे—'ऐन्द्र वारुण वायव्याः सौम्याः वै नैॠतास्तथा । वायसाः प्रतिगृह्णन्तु भूमौ पिंडमयार्पितम्' } ॥

कला सोरह, (वही) चौंसठि (होता है)—'कला तरंग' मे (स्पष्ट) ॥

मारी चोंच कुचन के अंतर दाडिम तेहि अनुमाना
राम देव पहिचानि लियो तेहि छोडि दियो करि काना ४ १

मारी चोंच कुचन० बालिमीकि मत । 'रामायन परिचर्या' में 'सीता चरन चोंच हति भागा' यहि की व्याख्या मे भले लिखा—सीता के आँचर मे चोच हति कै भागा । 'आँचरा' यहि पद से उरोजै कै बोध है । भक्ति मरजादि से साक्षात कुच का नाम न कहा' ॥

रामदेव पहिचानि लियो० बल बुद्धि सहाय समेत । छोडि दियो करि काना रामायन परिचर्या—'एक आँखि [नयन] करि तजा भवानी' यहि की व्याख्या मे भले ॥

[३७]　　धनाश्री

लछिमन यह बिराध रिपु आवा
करियै कवन उपाया ॥

जनु कठोरपन रूप धरे है पर को परम सहाया
कर त्रिशूल धर धूरि उडावत जाको तनिक न दाया १

० बिराध रिपु ❀ ❀ ❀ कठोर पन निठुराई ॥

देषत सो सीता हरि लेइगा राम धोष बड पाया
कोमलता परिपाक सरन्ह से जीवत ताहि गिराया २

० सीता हरि लेइगा० श्रीमद्रारायायण अमुक [३.२.१७] श्लोक ॥ कोमलता ऐसे कठोर बान न लगै (कि) जेसे तुरितै मरै । परिपाक सरविद्या की कुशलता, परिपक्वतासे कि जिन मरम (स्थान) मे लगे तुरत मरत बचि उन अंगन मे लगै जेसे जियत गिरै । 'महाभारत-विराट पर्व अध्याय ५७[1] अर्जुन-कृपाचार्य के लड़ाई मे भले'[2]

महि षनि कै जो गाडि दियो सो अपने रूप मिलाया
दूसर जन्म भयो जनु सिय को राम चरन सिरु नाया ३

अपने रूप पार्थिव देह सम्बन्ध (से), वा, सत्ता रूप रामै सो [वही] [पृथ्वी] (क्योंकि) आदि अन्त मे (अन्य) दूसर के ठहरी ! ॥

हरषे राम सिया तन हेरे अनुजहिं कंठ लगाया
देव दुंदुभी बाजन लागी राम सुजस बड छाया ४　　२

[३८]　　झँझवटी

भाई पंचबटी के रन मे
बडो रंग समुझन मे ॥

चाह सुपनपा सदा सोहागिनि पेलि रही मन बन मे
लषन दास तेहि के धरि काटे नाक कान एक छन मे १

भाई सम्बोधन, वा, अच्छी लगी । बड़ो रंग समुझन मे बड़ो रंग ॥

---

१ टीका मे अध्याय सं० २३ लिखी है, वह भ्रामक प्रतीत होता है । २ 'ख' मे नही ।

चाह इच्छा, सुपनषा सोई । सदा सोहागिनि सब वहि के पति (क्योंकि वह) सबसे आपन काम पूर्ति चाहत । मन बन मन बन' कै पटतर, सब काम वही मे, (यह) भाव लेइ कै ॥ लषन दास पराधीनै के आपन चाह जोर नाही देखाय सकत ॥

पर है क्रोध लोभ है दूषन काम बसै' त्रिशिरन मे
कामै क्रोध लोभ बनि दरसै तीनिउँ एकै तन मे २

कामै क्रोध लोभ ० पहिले काम-इच्छा होई, पूर्ण न भए क्रोध, परचे अधिक लोभ ॥

हते सदल त्रिसिरा औ दूषन कोउ न बचा सयनन मे
इंद्र अस्त्र पर के उर मारा जय जय भइ त्रिभुवन मे ३

सयनन मे खरादिके ॥ इंद्र अस्त्र इन्द्र त्रैलोक्य नाथ, तेसे ॥

पाँचौ बट ते पंच बदन हैं त्र्यंबक बर देवन मे
अज स्थान सो जन स्थान है जो उत्तम क्षेत्रन मे ४ ३

बर महा ॥ जन 'ज' जायमान, 'न' नाही, भाव, 'अज' अजन्मा ॥ ३ ॥

[३६] बसंत

महामोह रावन सें यह सब बात सुपनपैं जाइ कही
सो बोला तिनकर बध नाही यह बध मोरै भयो सही ॥

महामोह० ❀ ❀ ❀ यह बध मोरै० क्रोधादि नास से मोह बलहीन ॥

बडो द्वार लंका को टूटो अब अस दूसर बीर नही
संग पषंड लेइ तब धावा याको उत्तर दीन्ह चही ॥

लंका 'प्रवृत्ति { वपुष ब्रह्माण्ड सुप्रवृत्ति लंका दुर्ग' विनय पत्रिका } (तथा) यहि ग्रन्थौ मे आगे 'लंका गढ़ प्रवृत्ति को फिरिफिरि' (पद ४४) । पषंड मारीच ॥

दंड कुसुंभ कमंडलु धारी बनिकै गा सिय आश्रमही
कंद मूल फल देन उठी सिय बँधी भीषि नहि लेउँ यही ॥

दंड त्रिदंड । कुसुंभ काषाय वस्त्र ॥ ० बँधा भीष ० रामायन परिचरजा 'बंधी भीख नहि लेहुँ सयानी' यहि की व्याख्या मे भले' लिखा—'हम सन्यासी बंधन रहित; कैदिन कै भिक्षा न लेब' ।

१—ख मे नही । २—क मे नही ।

कुंडल सी लछमन के धनु कृत रेष नाघि सिय ठाढि मही
देव चरित्र न जानत कोऊ सो रावन घर जाय रही ४

[४०]

घोर कबंध करम बंधन सो राम लषन तहँ आय फसे
ताके दोउ भुज काटि गिराये ग्यान षरग सो बहुत कसे

'घोर कबंध ('क' 'बंध') 'क'—कर्म (उसका 'बंध'[1]) ॥ दोउ भुज दूनौ कर्म—सत-असत । ग्यान षरग सो ज्ञानै रूपी खड्ग से कर्म कटत है ॥

भक्ति रूप शबरी के आश्रम तब दोऊ जन जाय धसे
ग्यान रूप सुग्रीव कहा तेहिं राम देव मन माह हँसे ५

इति अरण्य कांड

शबरी सवर भील; रामायन परिचरजा—'साबर मंत्र जाल जेहि सिरजा' एहि की व्याख्या मे—[2]अर्थ—सवर नाम भील का; तेहि रूप से (शंकरजी) भाषा मन्त्र रचे तेहिते, 'साबर' नाम परा । एहि रूपते—'मीमांसा-सूत्रहू' पर बनायन्हि, तेहिते 'साबर भाष्य' कहावा[2] ॥

हँसे हेतु—भक्ति द्वारा ग्यान कै प्राप्ति जेसे विद्या कै ठेकाना ॥ ५ ॥

इति अरण्य कांड

[४१]

विप्र रूप मारुत सुत आयो ऋष्यमूक पर राम बसे
ग्यान मान बाली अति दुर्दम ताके भय सुग्रीव ग्रसे

ऋष्यमूक रामायन परिचरजा—'रिष्यमूक परबत नियराया' यहि की व्याखया मे—'रिषि' मतंग—'अमूक', जागती जोति रहत है; तेहि से 'रिष्यमूक' नाम परा ॥

ग्यान मान ग्यान आभास (मात्र) । दुर्दम कठिन (-ता) से दबावै जोग ॥

ताकों एक बान से मारा तब सुकंठ निज पद बिलसे
राम देव की दया पाइकै रावन बध को कपि हुलसे १

निज सत्य ग्यान ॥ ४१ ॥

१—क मे—घोर कवंध औ कर्म । २—केवल ख संशोधन ।

[४२] सोरठ

पवन सुत रुद्रहि को अवतार
पोंछि मनहुँ ॐकार ॥

उग्र नयन मुष बिकट दसन नष कृत निश्चर संघार
भूत प्रेत गण संग रहत है कदली बिपिन बिहार १

रुद्रहि को अवतार पवन कुमार (पर) आत्मा अवतार न बूझै ॥ 'पोंछि मनहु ॐकार आकार से'[1] ॥

उग्र नयन० तमो गुणी रुद्र माने (गये हैं) । **भूत प्रेत गण०** इहौं ।

कदली बिपिन बिहार 'एहू से रुद्रता; काम नाशक भाव'[2] ॥ १ ॥

कातिक कृष्न पच्छ की चौदसि साँझि समय सनिवार
मेष लगन मे प्रगट भये यह समयौ करत पुकार २

कातिक कृष्न० कृष्न पच्छ चतुर्दसी—शिवरात्रि । **साँझि समय** सन्ध्यौ प्रलय काल । **सनिबार** सनिउँ क्रूर, नासक (क्योंकि) मकर (और) कुम्भ के शनि मालिक (हैं, और ये मकर, कुम्भ) पतिभार समय । **मेष** ईशान का वर्ग है ॥

मदन सदन बाँई हनु टूटी लागा बज्र प्रहार
मदन दहन को लच्छन झलको याको करहु बिचार ३

मदन सदन० { द्र०—श्री कृष्ण चरण परिचर्या विवृति } ॥

बुद्धिमंत चिरजीवी बलनिधि लछिमन प्रान अधार
इष्टदेव रघुनायक जाके जो कपि दल सिंगार ४

इति किष्किधा कांड

बुद्धिमंत सर्व सास्त्रादि ग्यान । **चिरजीवी** मृत्युंजयता । **बलनिधि** त्रिपुर बध मे महादेवता । **लछिमन प्रान०** भुजंग भूषन रुद्र तथा इहाँ सेस-अवतार (लक्ष्मण को) जिआये ॥ **इष्टदेव रघुनायक०** रुद्रौ के । **कपिदल सिंगार** 'कपिदल-सिंगार' से पशु पतित्व ॥ २ ॥

इति किष्किधा कांड

१—ख—के संशोधन में—'औ प्रणौ अवतार ब्रह्म पोंछ मे भले रहा—उपनिषदादि ख्यात' इतना लिखकर काट दिया गया है । २—क—में नही ।

[४३]   बसंत

बिषय बाग अति सुंदर लागा तेहि हनुमंत बिराग उजारत
बिसनी से रषवारे मारे अत्त बसंतहु कों हति डारत १

बिषय भोग सामग्री। ० बिराग उजारत बिराग अवतै (विषय) तहस नहस ॥ बिसना [व्यसनी] रसिया। अत्त बसंतहु को० (बसन्त) काम-सखा (तथा) परम सहाई ॥

मन्मथ इंद्रजीत तब ताकहँ बाँधि मोह की नजरि गुजारत
लंका गढ प्रवृत्ति को फिरि फिरि पूँछ अगिनि सो बरबस जारत २

{ नजरि गुजारत नजर करना } ॥ प्रवृत्ति फँदाव। पूँछ श्रुति मे लिखा—'पोछ में ब्रह्म कै बड़ाई।' [१]'अगिनि[१] ब्रह्म ग्यानाग्नि ॥

सो बिराग एहि पारहि आवा महामोह अपने जिय हारत
राजजोग जुवराज हुकुम से मधुबन बादहु को रस गारत ३

राजजोग राजा होए लायक, बालि कै औरस (अथवा, 'राजयोग')। बाद सिद्धांत विरोधी ॥

अनुभव चूडामणि कपि दीन्हा देषत राम नयन जल ढारत
देय डंका दल सहित देव तब हर्षित सागर तीर सिधारत ४ १

अनुभव फैलि सूक्ष्म होय वा बड़ी दूर कै समीप ॥ ४३ ॥

[४४]

सुप संपति तजि कै अधिकारी सरन भभीषन आवा है
साथ चारि साधन से मंत्री छोडि कपट सिर नावा है ॥

अधिकारी गीता मे—आरत-१, जेहि के जानै की इच्छा [जिज्ञासु]-२, अर्थार्थी-३, ग्यानी-४ ॥

चारि साधन०—साधन चतुष्टय—'सम'[२] सांति याने रोकब[२]-१, 'दम'[२]बटोरब, काबू मे इन्द्रिन के करब[२]-२, 'उपरति'[२]-उबेठब[२]-३ 'तितिक्षा' सहब[२]-४ ॥

१—ख में नही। २—केवल ख के संशोधन में।

देषि सत्यता औरि दीनता रघुपति के मन भावा है
कहि लंकेश तिलक तेहि सारा डंका कपिन्ह बजावा है ॥
देषि सत्यता० ❀ ❀ ❀ ॥
रावन अछत तिलक तेहि सारा सो सीतहि समुझावा है
अवधि थोरि बाकी अस सिय के रहा बहुत पछतावा है ॥
रावन अछत तिलक० शंका। सो सीतहि समुझावा है उत्तर (क्योंकि) 'अवधि थोरि'० ॥
छन मे प्रलय करै औ उतपति जो अस श्रुति मे गावा है
सो नरदेव बडा दल लेइ कै सागर तट पर छावा है ॥ २

इति सुदर कांड

छन मे प्रलय० ❀ ❀ ❀ ॥ नरदेव–'नर' पुरुष 'देव' राजा, 'भाव :– देवतन के देव महादेव, राजन के राजा महाराज' ॥ ४४ ॥

इति सुन्दर कांड

[४५] बिलावल

भली प्रभु राजनीति ठहराई
अरि के इष्टहि अपनावन कों शिव थापना कराई १
भली० राजनीति विभेद (नीति) ॥
ग्यान सुकंठ तहाँ अगुआ भौ लेय साधन समुदाई
भव सागर पर सेतु बनायो रामहि की प्रभुताई २
ग्यान सुकंठ महा मोह (रावण के) जीतै की फौज। साधन अष्टांग जोग ॥
नभ पथ जल चर सेतु पंथ से उतरी सब कटकाई
गिरि सुबेल पर परिगौ डेरा रावन सुनत डेराई ३
नभ पथ (से) योगादि ज्ञान साधन (हनुमान अंगद सुग्रीवादि)। जल चर कर्मकांड, 'सेतु' बेदोक्त विधि ॥
सुबेल भौ सागर पार भए सब 'बेला' [समय] सुबेल, औ प्रवाहौ कै (तट) ॥
सुनतै रावन अति व्याकुल भा अपनी सैन बोलाई
सुरचन पर ते स्वर धरे जिन्ह जीती देव लराई ४ [1]

१—केवल ख में पार्श्व पर।

जीती देव लराई कामादि (मेघनाद—'पाकारिजित काम' विनय पत्रिका ५८) इन्द्रादिउ जिनसे हारे ॥ ४५ ॥

[४६] *बसंत*

राम लषन दोउ नही सहोदर कोकिल मुनि तौ तदपि कह्यो
यह सुनि संशय कोऊ कर जिनि यामे परम रहस्य रह्यो १

कोकिल बालमीकि ॥

कहत उपनिषद संग शेष औ हरि को गर्भौ मे निवह्यो
एहि प्रमान ते भये सहोदर अब को बाद बिबाद चह्यो २

० उपनिषद शेषोपनिषद—[1]"गर्भौ मे नाही छोड़ते जे देव के"[1] ॥

कहँ कपि लछिमन दुइ माता के सुनतै सिय बिश्वास लह्यो
बालमीकि के एहि बचनौ ते वही सहोदर अर्थ सह्यो ३

कहँ कपि लछिमन दुइ माता० श्रीमद्रामायण—सुन्दर कांड, सर्ग (३५, श्लोक २२)—'भाई जेके हैं दुइ मतारी से भए, सुमित्रा के पुत्र जे नाही भगैया' ॥

एक उदर मे बसे सहोदर पाणिनि मुनि अस अर्थ मह्यो
रात्रि जुद्ध मे रामदेव हू ऐसो मन मे भाव गह्यो ४ २

पाणिनि मुनि० एक पेट (मे) रहै से सहोदर ॥ रात्रि जुद्ध मे रामदेव हू दुसरो वचन से—वालिमीकि के (राम-लक्ष्मण का सहोदरत्व सिद्ध) युद्ध कांड में—राम वाक्य सर्ग (१०१, श्लोक—१५) 'देस देस मे स्त्री आदि और सबन्धी (परन्तु) ऊ देस नाही देखित जहाँ सहोदर भाई' ॥ ४६ ॥

[४७] *मेघ मलार*

मचो है दोउन को रन रंग ॥
ग्यान कटक इत उत मोहै को कामादिक दल बंग १

ग्यान कटक सुग्रीव दल । मोह रावनदल—काम वोगैरह । बंग विषम, टेढा, वा 'वंगा' रिंदा ॥

१—टीका में लेखक ने भ्रम से गर्भोपनिषद लिख दिया है, वस्तुतः वह शेषोपनिषद होना चाहिए, जैसा कि—श्री स्वामी जी के रामायण व्याख्यान परिशिष्ट से स्पष्ट है । 'अतएव शेषोपनिषदि गर्भेऽपि योऽनुससार विष्णुम्' ।

अहंकार से कुंभकरन को राम किया मद भंग
दास भाव मन्मथ को जीतत लेय बिराग को संग २

अहंकार बहुत ऊँच ॥ **दास भाव** लछिमन ?

संका:—'विद्या सीय लषन सुकरम' (यह रूपक) दुसरे ग्रन्थ में अनंत श्री चरण लिषे। { यहाँ पर लक्ष्मण को दास भाव, और अन्यत्र सुकर्म; एक ही लक्ष्मण के लिए दो विभिन्न रूपकों पर शंका है } ।

समधान:—'दास' दास्य-भाव कमैं; (वस्तुतः) सुकर्म तबै होय जौ तनिकौ इन्द्री मनादि से स्वतंत्र न होई ।

तब **मन्मथ** सब मनोज मन जरिहि [मन रूपी जड़] गए-गए । **बिराग** हनुमान, **संग** सहाय भए विषय बल न चली ॥

और लरी जोरी सन जोरी साधन अंग उपंग
जोरी लरी राम रावन की रावन भा अति तंग ३

जोरी द्वंद । साधन जोगादि के । अंग उपंग उद्दीपनादि सामग्री (काम की), और ग्यान-वैराग्यौ कै ॥ **राम** आत्मा राम । **रावन** महामोह ॥

नाभि सुधा सत्ता के सोषत भा निरजीव निहंग
बिजय भयो श्री रामचंद्र को देषि देव भयो दंग ४ ३

नाभि जहाँ दूनौ हंसन के नेवास, औ प्रान-अपान की ग्रंथि । **सुधा सत्ता के सोषत** इतिहास, पुरान (और) काव्य में लिखा—'उहै सरोवर जेहि से जियत औ (जिसके) नसे नसत' **निहंग** { 'नंगा, बेहया, बेशरम'—हिन्दी शब्द सागर } ॥

देव भयो दंग जो सबसे अजेय रहा ॥ ४७ ॥

[४८]

भैरव

महामोह को जीति अवधि में रामचंद्र सम्राज भये
इंद्रिय प्रजा चरत सुधरम को उपजत सुष नित नित्य नये १

त्रैलोक्य विजयौ भए मोहादि न जीते जायँ तौ साम्राज न कहाई । यद्यपि रावनादिउ स्वर्ग पाताल जीति निज वस राखे, परंतु (सम्राट् पद) मोहादिउ के जीति । **अवधि में** रावनादि विजै [विजय] अतिरिक्त जो सखा, परम प्रिय रहे तिनहूँ के विदा किए (यह श्री रामचन्द्र जी के मोहविजय का प्रतीक है) ॥

इंद्रिय प्रजा आत्माराम की प्रजा—इंद्री बस रहै से औ स्त्री लिंग होए से । **चरत सुधरम को** वरनास्रम धर्म अनुकूल, तव **उपजत सुष०** की धर्म छोड़ेहि दुख लागत हैं ॥

मन के बस इंद्रिय मन मति बस मति आतम को रस अँचये
आतम परमातम ये दोऊ रामराज निज रंग रये २

मन के बस० उत्तरोत्तर जैसे चाही। औ स्वतंत्र न रहै से मति कै धर्म विचारि, विचार पूर्वक मन (अपना) चांचल्य छोड़ि—जो अति वेगवान—चली औ चलाई तौ भलेहि बना चाहै; (जैसे) सेनापति (के) सेन (तथा) प्रजा समेत सन्नद्ध रहे पर (सत्रु) सेना सींवा झाकिहि न सकी ॥

आतम परमातम० अंसी अंस वा जैसा भेदाभेद लोग माने ॥

घट घट मे निज रूपै देषत याते बैर बिरोध गये
एक एक को हित चाहत है रामराज सम भाव छये ३

घट घट मे निज रूपै पराभक्ति औ अद्वैत निष्ठो भए। **बैर बिरोध** वैर करिकै जो विरोध, वा निज (तथा) पर (के कारण उत्पन्न विरोध) ॥ **एक एक को हित०** (जब) विषमतै नाहीं तौ दुसरे कै हित अपनै, औ प्रभु हितौ बनै ॥

राम चरन अरचत नर नारी परमारथ को बीज बये
एहि अनंद मे सदा बसहु तुम्ह देवहु अस बरदान दये ४ ४

इति लंका कांड

(रामराज्य का यह रहस्य) सब अपने प्रति बूझै ॥ ४ ॥

॥ इति लंका कांड ॥

अथ राम सेवा　　　　[४६]　　　　जाजवंती

कवनी निंदिया सोय रहेउ
अब जागहु जियरा ॥
तीनि पहर तौ सोवत बीते चउथौ काहे षोय रहेउ १

कवनी निंदिया० उपदेस—जो जीव भूलि मोह निद्रा मे परा (उसे) जगावन ॥ **तीन पहर** तीन पन ॥

जग भोगी तस्कर जोगिन को निसा भाग अस होय रहेउ
चारि पहर मे चारिउ जागँहि तूँ कस अनरथ बोय रहेउ २

जग 'जग' (शब्द) से जगत वासिन मे लक्षणा, वा; 'जग' चेतन, अग के सेवाय सब (जंगम जगत)। **भोगी** विसनी [व्यसनी]। **तस्कर** चोर ॥

{ ये चारो—जग, भोगी, तस्कर तथा योगी रात्रि के प्रथमादि-प्रहर मे क्रम से जागते है। }

हेतु—पहिले पहर, खान पानादि व्यवहार मे सब (जगत जागता है) उनके सोये भोगिन के जागै कै समय (द्वितीय प्रहर) । उहाँ सूतैं तब (तृतीय प्रहर मे) चोरन कै घात लगै । जोगिन कै पिछले पहर, (यह) समाधि ध्यानादि कै काल ॥

तूँ कस अनरथ० संसार मे (सोने का) एतनै भाग (अतः) अपना के (जग भोगी आदि) किन मे ठहराए, की अर्थ धर्मादि जथा-काल सेवन चाही ॥

सूष हाड से इन्ह विषयन मे रस कूकर सा टोय रहेउ
काम क्रोध मद मोह लोभ को नाहक बोझा ढोय रहेउ ३

सूष हाड जिनमे रस कै लेशौ नाहीं औ (ऐसा) मलीन कि जिनके [जिनको] घातक पक्षी आदिउ नाहीं खाते । रस कूकर सो पुरान पटतर । अपनेहि तालू मुख के रुधिर से वो (हड्डी) मे रस मानत । आगे के पद मे स्पष्ट—'विषयो नहि पहिचाना' ॥ ० नाहक बोझा इहौं (सुख दुख के व्याज से) औ कर्मन से अनेक जोनिन मे (भी) ॥

श्रुति बचनन से जागा तब मल देव नदी मे धोय रहेउ
सीता राम चरन रति उपजी हरि गुन माला पोय रहेउ ४

श्रुति बचनन से वेद मे जो बोध हेतु है—गुरु आदि द्वारा । देव नदी हृदय वाली ॥ हरि गुन माला (हरि) गुनन के जो अनेक स्थल में (वर्णन उसे) विचार सूत मे पोय रहेउ ॥ १ ॥

[५०] देवोत्थापन बिभास

मंगल उषा समय दिन मुष है ॥
जहँ तहँ लोग जागे गौवा दुहन लागे लोहिया लगन को रुष है १
नषत झलमलाये चंदहु लटकि आये रजनी होइ रही धुष है २

मंगल रात्रि रूपी अमंगल नासै से कि (रात्रि के ब्याज से) नित्त प्रलय ॥

उषा ❀ ❀ ❀ लोहिया अरुनोदय—तीनि घरी राति रहे ॥ रजनी० धुष है—निज पति चन्द के वियोग से ॥

हवा लागे तनहू मे कामिनी के मनहूँ मे पिय बिछुरन को दुष है ३
देव देव जागौ अब द्वार षडे दास सब देहु जगत को सुष है ४

० दुष है कि प्रात होई । "[१]सदा गति वायु है अग जग मे लगि रही"[१] ।

१—केवल ख मे पार्श्व पर ।

'लागे तनहू मे दुष कै अन्वय (तन तथा मन) दूनौ मे (क्योंकि) विरह दसा मे सीतल मन्दादि वायु दुषद[1] ॥ देव देव राजन के राजा ॥ २ ॥

[५१] भैरव

बंदीजन बेद महाराज को जगावैं
ललित मधुर सुर सँवारि बिमल सुजस गावैं १

बंदीजन बेद बंदी जन औ वेद, दूनौ (अपने अपने) रूप मे, वा, वंदिहि वेद रूप धारी। 'बंदी'—स्तुति-वन्दना कथन करै से, वा, 'बंद'—तुक अनेक छंदन के जिनके हृदय (तथा) मुख मे है। वेद पक्ष मे 'बं'-बंध, 'द' खंडन करैं, सो वंदी { बंधन षंडन हूते बंदी द्र०—पंचक्रोश सुधा—३३ }। **महाराज** प्रजा रंजन, औ अति शोभा पावै से। (महाराज की ये दोनो—'प्रजा रंजन तथा अति शोभा' वाली व्युत्पत्तियाँ) 'इहैं जथार्थ, की वैराज्यादि चारो, और ठाँव असंभौ। (वैराज्यादि ये हैं)—प्राजापत्य, वैराज्य, पारमेष्ठ, साम्राज ॥

ललित सुन्दर वा ललितादि रागिनी। **मधुर सुर** की भैरवी आदि मे प्रायः कोमलै सुर हैं। **सवारो** जैसी राति,—ग्रामन औ आरोही-औरोही की (तथा) कोमल, तीवर [तीव्र] वादी विवादी आदि से। **बिमल सुजस** रावनादिउ के विजयादि जस हैं पै विमल नाही, (क्योंकि—जस की विमलता तो) रघुनन्दनै से ॥

जोग ग्यान धर्म चरत कोटि जनम जावैं
रावरो सरूप बिना जाने फिरि आवैं २

जोग ग्यान धर्म॰ जोगादि कै सार ध्यानै, औ ग्यानौ—(दीप) कर्म-सनेह बिनु (निष्प्राण, यथा) 'रामसुधा'—बाल कांड मे 'एतो बड़ो मुनि ग्यानी'—यहि पद में लिखि आए। फेर जो (कर्म स्नेह का) लेस रहत (उसे) उठे अनेक जन्म धरै के परी। (इसीलिए कर्म की बिमलता—'रघुनन्दनै से')।

॰ **फिरि आवैं** ग्यानिनौ कै फिरब उपनिषद मे लिखा, औ जोग-भ्रष्टौ कै अनेक ठौर (अतः भगवान का) रूपै जाने (योनि-भ्रमण) सिरात ॥

छवो शास्त्र उलटि पलटि जीभि मन थकावैं
राउर लीला पिऊष अँचइ ठौर पावैं ३

लीला पिऊष लीलामृतै से अमर, अमृत पीयै की (जरूरत) नाहीं। बरुक ओहू [सामान्य अमृत] से (भी) अधिक (लाभ) परम मोच्छ ॥

१—केवल ख में पार्श्व पर।

नाम ब्रह्म को न जानि बाद को बढ़ावैं

नाम मे अनामता बिलास देव भावैं ४

नाम ब्रह्म हेतु, बहुत ग्रन्थन मे महात्म्य। मीमांसक-मत से नामै सब, औ ब्रह्मता नामै मे। अन्य विग्रह में (भी) कर चरनादि मंत्र मै [मय] 'मानै से'। (नामोपासना साक्षात्) ब्रह्मोपासना औ सदा रहैया—[अविनाशी], औ नामै कै नाम नाही, (अतः नाम मे ही) ब्रह्मता। **न जानि बाद०** (इस प्रकार आप के नाम रूप का रहस्य) बिना जाने, नाम रूप माइक ठहराइ लरत हैं॥ **नाम मे अनामता०** अनामता औ देव बिलास नामै में। 'अनाम'—नाम रहित देव कै। **भावै** वेद तंत्र रीति से भावना (क्योंकि) मंत्र मय देवता, औ नामै से बीज-मंत्र बने॥ ३॥

[५२] भैरव

बाजत बीणा मृदंग
ताल बाँसुरी उपंग
बढत तान को तरंग
नाद ब्रह्म जगि रह्यो॥

नाचत ततथेय्य थेय्य
करन ताल दे्य्य दे्य्य
उपज बिबिध लेय्य लेय्य
सुनि मुनि मन डगि रह्यो १

बीणा सरस्वती, तुंमुर आदि नाम के भेद से बनी; (तथा) 'विपंची' आदि नाम जेके। **मृदंग** सोरह कलावान चन्द्र सद्रिस "कला तरंग"[२] मे लिखा। **ताल**—करतल आकार, मजीरादि नाम। उपंग ❀❀❀ **बढत तान को तरंग** वीनादि स्वर से डेवढ़ दून घट बढ़, लै [लय] की। **नाद ब्रह्म** वैयाकरणादि जो माने॥

नाचत ततथेय्य० 'संगीत भेद' के जैसी तृतीय अध्याय मे भेद—परन, तोडा के। **करन ताल** हाथनौ से। **उपज बिबिध** सुराबर्त करि घटाये बढ़ाये जो नये नये रूप निकलत सो (विविध) उपज **सुनि मुनि मन०** ऐसी रीति से (स्वर संचार होता है) की जो सुने 'मुनि'—मननशील वा मौन्य, मन के जे काबू मे किये—तिनहूँ के ('मन डगि रह्यो')॥

१—क गे मानत। २—ग्रन्थकार की अन्य-संगीत सम्बन्धी रचना।

साज मनहुँ कमल पुंज
तहाँ उठत भँवर गुंज
याही मे राग कुंज
समुझत मन पगि रह्यो

होत लाग डाँट डपट
बीच बीच झाँक झपट
बेवँत लिये परत त्रिपट
गुनि जन मन ठगि रह्यो २

०भँवर गुंज सारंगी सुरचंगादिके गुंकार (तथा) औरनो के खरजादि [षडजादि] के आस में ०राग कुंज ठीक राग गुनि जन के भले विचारे पीछे बुझात। ०मन पगि रह्यो राग रंग आदि[१] मे ॥

लाग सुर, ताल, तानादि। डाँट कालादि। डपट सम आदि पर, झाँक झपट नाचै गावै में। बेवँत जो बेवँत कि तान ताल औ नाचै औ भावभेद से। त्रिपट अन्त मे पषाउज आदि के तोड़ा, होरी आदि के ताल मे औ घुघुरु आदि की तियैया [त्रिगुण]। ०मन जो मन चंचल (उसे-'ठगि रह्यो')। गुनि जन गुनी-जनैया लोगन कै वो "गुनी'—मननशील[२] ॥

झमकि धमकि घूमि झूमि
आइ जाइ ताकि डाँकि
नूपुर झनकार झरत
तिन मे ज्ञिय लगि रह्यो

साज नाच दूनौ मिलि
गीत ही को पुरन करत
तीनिहु मे एक रूप
राग ताग तगि रह्यो ३

झमकि धमकि जेहि बेवँत से (ऊपर) कहे। घूमि झूमि० तान (और) तालिन के सुर-लय जैसे चाही (वैसा) राखि (तथा) तान उपज औ साजन के दून, झारा-ठोंक-औ नाचौ के सोरह मंडल के भेद से 'झमकि' निकरि, 'धमकि'

१—केवल 'ख' के पार्श्व पर। २—क मे नही।

ठहरी। 'घूमि' पलटा [पुनरावर्त्तन] तान ताल श्रौ नृत्य लास्य भेद के। 'भूमि' एकै जगह। **'श्राइ जाइ'** साज गान के श्रारोह श्रौरोह [अवरोह] भेद से। **ताकि सुर** लय (की गति देखकर)। **डाँकि** श्रोडो [श्रोड़व] खाढो [षाडव] श्रौ काल भेद। **नूपुर झनकार** घुघुरुश्रों के तोडन से गरे [निकले] श्रौ हाथन कै काम। **जिय लगि०** सब सिजिल [शिथिल] भए॥

साज नाच० गीत ही को० साज से (अर्थात्) वीनादि—जेहि सप्तक के सुर गरे (से) नाहीं निसारि सकते (उसे) पूरन करत, श्रौ मृदंग नाच से (अव्यक्त) पद क्षेद [पदक्षेप] (को पूर्ण करता है) श्रौ भाव से पुर्न (इस प्रकार) भाव, शब्द, अर्थ—तीनहु मे एक रूप—तीनौ मिलाए पूरन संगीत श्रौ एक रूप। **राग ताग तगि रह्यो** (तीनो-नृत्य वाद्य एवं गीत मे) रागै कै सूत नथा॥ ३॥

जहँ न जाइ इंद्रिय मन
शब्द तहाँ करै गमन
याही त जगे देव
पाप दोष भगि रह्यो
उघरे तब सुभग द्वार
सजत आरती प्रकार
दासन को मानस श्री
राम रंग रँगि रह्यो ४

जहँ न जाइ इंद्रिय मन शब्द तहाँ० (शब्द की यह इंद्रियातीत गति) प्रत्यक्ष, (यथा) कोई दूर श्राँखिन के श्रोट वा अति अँधेरे मे होय तौ श्राँखि से न देखी, श्रौ विना देखे कैसे कोई से सुनी, (अनुभव के यही दो साधन हैं—इनसे व्यतिरिक्त), अनुभव-अनुमान (का साधन) मनौ न पहुँची, (परन्तु इसके विपरीत) पुकारे, शब्द सर्वादि [श्राकाश] मे। परमाणु रूप—श्राकाश कै शब्दै-गुन रही, कि द्रव्यन कै गुनन मे उत्तरोत्तर लय भये श्राकास मे परमाणु रूप शब्दै रही। (उदाहरणार्थ) अलख [परमेश्वर] लौ जहाँ ब्रह्मादिउ नाहीं पहुँचि सके (वहाँ) 'त्राहि त्राहि' शब्दै पहुँचा। **याही तें जगे देव** (जिसका) सब काल ऐश्वर्य-माधुर्य-सब रूपौ मे (व्याप्त)। **पाप दोष भगि रह्यो** पापहा के उठतै॥

उघरे तब सुभग द्वार महाराजधिराज के, श्रौर हृदय वाले, वा 'नेत्र द्वार[1]'। **श्रारती प्रकार०** जेहि रीति की लिखी। **मानस०** रँगि रह्यो ध्यान दरसन से॥ ४॥

१—केवल 'ख' के पार्श्व पर।

आरती   [५३]   ललित

मंगल आरति श्रीरघुपति की
तिमिर हरनि अगतिन के गति की ॥

मंगल आरति० ऊषा समय वाली । 'श्री रघुपति जानकी जुत' ॥

तिमिर हरनि सब अन्धकार (दूर करने वाली) । **अगतिन के गति की** प्रकास भये गति बनत । औ एहि आरती के दरसन-ध्यान से अगती जो हैं—जिनके उद्धार कै कौनो राह नाहीं (उनकी) 'गति' छुटै की (बनत) ॥

तुम्हरे जगे सकल जग जागै बलिहारी सुंदर मुष रति की
अंगन की छबि केहि बिधि बरनौ पहुँच नही काहू के मति की ॥

तुम्हरे जगे सकल जग जागै माधुर्ज (पक्ष) मे—राजै सब धर्म कै नियंता (अतः उसी को) देखि सब उहै चाल चलत हैं; औ दूसरे (ऐश्वर्य पक्ष में—) जिनके आँख मूँदे प्रलय औ जागे सृष्टि । **रति** सोभा कांति ॥

अंगन की छवि ० वेदादि (भी) थके (तो) काव्यादि रीति से कैसे बुद्धिहि पहुँचै—एकै अंग पर रहि जात ॥

श्रुतिहु न जानि सकै प्रभु महिमा लघु ते लघु की अति तें अति की
बाहर देव षडे कर जोरे आसा एक चरन रज नति की १

० **लघुते लघु**० वेदै कहै—'छोटे से छोटा बड़े से बड़ा' ॥ **बाहर देव षडे** दूनौ (माधुर्य तथा ऐश्वर्य) पक्ष में (क्रमशः) 'देव' देवता औ राजा । **नति** नम्रता । **चरन रज** 'दास्यादि भाव-वालन की पहुँच चरन [नै] लै । जिनकी जहाँ लै अधिकार औ पहुँचि पहुँचत' ॥ ५ ॥

[५४]

राम चरण पूजन बिधि दिन दिन निर्मल ग्यान जगावत है
अनायास हंकार धोइकै राम रूप दरसावत है १

० **ग्यान जगावत है** हेतु :—**अनायास हंकार धोइ कै** अहंता-ममता मुख्य अविद्या के परिवार मे (वह 'राम चरन पूजन'—दास कर्म से) मैं सेवक (यह भावना उत्पन्न होते ही) देहाहंकार वे मेहनत छूटत । **रामरूप** 'जो सबमे रमा' (उसे) अपनेउँ देखी (तब) सेवक बनि निर्मल ज्ञान जगी ॥

१—केवल ख मे—पार्श्व पर ॥

आसन पाद्य आदि शब्दन मे सदृश लच्छणा आवत है
याही ते उपचार नाम भौ पात्रौ यही दिढावत है २

○ **सदृश लच्छणा**○ (प्रभु) के तेहि तेहि अंग की ॥

उपचार 'उप' समीप 'चार' चलि जाय, भाव-समीप पहुँचै कै योग्यता। जैसे कोई भेट सामग्री अच्छी होय तौ बड़ेन के पास पहुँच सकत है (परन्तु) राम (तो) असंग, अरूप, अपार, अलख (इत्यादि हैं अतः) जीव के पास कोई वइसी चीज होय तो ऐसे [अरूप अपार इत्यादि] के पास पहुँचै, (जो ऐसा अशक्य, असंभाव्य-कर्म) सो (राम चरन) पूजन से अनायास होत ॥

अंगन सहित देह अर्पन करि ममता सकल छोडावत है
तब ममता भइ ईश्वर ही मे अहं दास अस भावत है ३

अंगन सहित○ तौ इंद्री देह आपन न रहे, सफल भये—देहादि अहंकार गये—ऐसे [अरूप अपार आदि] के नगीच की जोग्यता पावत है ॥

तब ममता भइ ईश्वर ही मे जो अहंता बड़ी दूर लैं पहुँची सो वे मेहनत (प्रत्यावर्तित होकर) **अहं दास** (प्रभु) मोर स्वामी मै (उनका) दास **अस भावत है** (पूजक) ऐसी भावना करत ॥

अंसी मे अंसै बनि रहिहै फिरि तैसै उपजावत है
निर्बिबाद सो देव दास को भेद सदा श्रुति गावत है ४

तब **अंसी मे अंसै बनि**○ जैसे सूर्य, वा महादाकास; कि जेहि के एक-एक किरिनि से एक-एक देश उजियार औ अनेक घटन मे परिछाहीं; (और) घटादि आकास—अंत मे अंसिहि [महदाकाश] मे मिला चाहैं [मिलते हैं]। **फिरि तैसे उपजावत है** जैसे समुद्र वा नदी से घटादि भरिल्याए अंत मे ए छोटे [घटादि के] अंस अंसिहि मे मिलि हैं ॥

निर्बिबाद श्रुति संमत होए से। **देव** स्वामी। **दास** गुलाम ॥ ६ ॥

[५५]

श्रुति स्मृति तंत्र पुरान पंथ से पूजन प्रभु को नित करियै
वचन अचार भाव औ अस्तुति क्रम से चारिउ के धरियै १

श्रुति श्रुति से वचन, स्मृति से आचार (तथा) पद्धति, **तंत्र** से भाव[1] औ यंत्र[1]। **पुरान** से स्तुति स्तोत्र, सहस्र नाम ॥

१—केवल ख मे।

आसन मूलाधार समर्पन आगेउँ ऐसेहँ अनुसरियै
एहि बिधि करि अंगन को अरपन भव सागर सुष सें तरियै २

आसन से आसन। **आगेउँ ऐसेहँ०** (यथा) पाद्य से—चरन, अर्घ से हाथ, आचमनीय से खान, इंद्रिन के छिद्र, औ (जैसा) हृदयादि आचमन विधि मे मन्त्रादि लिखे। स्नानीय से जलादि तत्व, वस्त्र से लज्या [लज्जा] जग्योपवीत से कर्म, चंदन से त्वच, फूल [सुमन] से मन, धूप से नासा, दीप से नयन, घंटादि वाद्य से आकाश—कान, नैवेद्य से रसना, ताम्बूल से पंचतत्व मिलित। नीराजन से स्फुरन (अर्थात्) अंग अंग के तम नास भाव। पुष्पांजलि से मन वृत्ति, प्रदच्छिणा से अखिल ब्रह्मांड जेमे अनकूल [दच्छिणा] करन, वन्दन से समूल देहँ अभिमान, सज्या [शय्या] से पीठ, स्तुति से बानी (तथा अन्य विशेष उपचारों का भाव) और ग्रन्थन मे भले लिखे ॥

भवसागर ० तरियै (अंगो के अर्पण से) विदेह होइ ॥

अंग अंग के तम नासन कों नीरांजन पथ मे ढरियै
साढे तीनिहि बेर फेरियै प्रणवरूप ताको बरियै ३

नीरांजन ० पहिले लिखि आये ॥ **साढे तीनिहि०** (प्रणव की) मात्रा मान ॥

देव होइकै देव पूजियै या बचनहु को आदरियै
आतम सो प्रिय यामे बरन्यो डरिकै बादहि परिहरियै ४

देव होइकै० श्रुत्यर्थ। **आतम सो प्रिय** ❀ ❀ ❀ ॥ ७ ॥

[५६]　　भैरवी

आरती करियै सियबर की
नष सिष छबिधर की ॥

लाल पीत अंबर अति साजै
मुष निरषत शारद ससि लाजै
तिलक चिलक भालन पर राजै
कुंकुम केसर की १

सिय बर जुगुल ॥

लाल सिया जी, **पीत** रामजी। **शारद ससि लाजै** अंक सहित, जैसे 'रामचरन परिचर्या' स्तोत्र [६२] मे 'जो दिव्य चिह्न सोई घनी नीलता औ जोन्हैया सीता' { 'यल्लक्ष्मदिव्यं घननीलता सा ज्योत्स्नेव सीता च कलेव लक्ष्मणः' }

चिलक चमक। भालन आदर मे बहुबचन औ भाषा मे प्रायः द्विवचन बहुत ख्यात नाहीं (अतः बहुवचन ही)। कुंकुम जानकी, केसर राम ॥

करन फूल कुंडल झलकत हैं
चंद्रहार मोती हलकत हैं
कर कंकन की छबि छलकत हैं
जगमग दिनकर की २

करन फूल कुंडल (सीता राम के कानों में) क्रम से। चंद्रहार मोती० चन्द्रहार औ मोती माल। कंकन स्त्री[1] भूषन औ कड़ा[1] ख्योतै[2]। जगमग० कंकनै (का) विशेषन ॥

मृदु तरवन मे अधिक ललाई
हास बिलास न किछु कहि जाई
चितवनि की गति अति सुषदाई
मन ही मन फरकी ३

चितवनि की गति ० अमृत सी, जो जरे विषयादि तीनों ताप के। मन ही मन फरकी (केवल) जेहि के अनुभव (मात्र) होय ॥

सिंघासन पर चँवर ढरत हैं
साज बजत जय जय उचरत हैं
सादर अस्तुति देव करत हैं
लोटरनि अनुचर की ४

लोटरनि अनुचर की सेवक प्रेम मे आय जो दंडवत करत हैं ॥ ८ ॥

[५७] अलैया

महाराज आइयै राजभोग पाईयै
ठाढी हैं कुवाँरी कन्या कर लिये आरती ॥
करत मंगल गान मधुर उठत तान
तृपित न होत कान जनु गावैं भारती ॥

राजभोग द्वितीय पहर कै। कुवाँरी कन्या मंगल ॥ भारती सरस्वती ॥

१—'क' मे 'कड़ा औ स्त्री भूषन'। २—'ख' मे नही।

द्विज मंत्र उच्चरत बैश्वदेव सपरत
जननी पियार करि तन धन वारती
रावरी पियारी छबि बरनि न सकै कबि
देवहू के हिय मे दीप जनु बारती १

मंत्र उच्चरत वेद मन्त्र। बैश्वदेव भूतजग्य (तथा) पंचसूनादि दोष (का) प्रायश्चित्तौ होत। जननो पियार करि उत्तम भोजन॥ देवहू के हिय मे० श्री ग्रन्थकार की उक्ति॥ ९॥

[५८]

भोजन के चारि थान तेई चारि भूत जान
भरन चहत नभ भरि नहि सकते॥
पेट ही को कार लागो ग्यान ध्यान सब त्यागो
कबहुँ न जिय जागो बेद बकि थकते

थान प्रकार। चारि भूत रोटी जाति पृथ्वी—कठिनता १। भात जाति जल २। दाल जाति तेज—जेहि से पियास लगै ३। तरकारी जति वायु—मांसादि—वातकर ४। नभ आकाश (तथा) पेट; अवकास (होने से)॥

पेट ही को कार लागो जगत मे। ग्यान ध्यान सब० प्रायः ओही के हेत-जप तप व्रत करत औ वेष बनवात। कबहुँ न जिय जागो ऐसे व्यापार से। बेद बकि थकते अनेक रीति से उपदेश करि॥

पेट की लपेट ही मे त्रिभुवन बझि रहो
प्राण निरोध तहाँ जोगी जन तकते
यामे बडो देव ग्यान याही मे जीवन प्रान
राम अमिय रस बार बार छकते १

त्रिभुवन बझि रहो करमन करि [कर्मों के द्वारा] देवौ (स्वर्गादि) लोक पाए केवल अमृतादि सुख मे लपटे औ (उसी प्रकार) नर, पशु, पक्षी सर्पादि (भी अपने अपने विषय सुख मे)। जोगी मुमुक्षू आत्मदरसी। प्राण निरोध प्रान पयान न करि जाय (एतदर्थ) सुचि, हित, मित आहार करि प्रानायाम आदि से काबू मे होव। तकते लषते॥

यामे बडो देव ग्यान अन्न ब्रह्म उपनिषद मे (व्यक्त) ''अंगुलिह के होता जान''। जीवन प्रान कलऊ [कलियुग] मे अन्नमय। अमिय अमृत, जग्य औ पितृ शेष जैसे 'उपपत्ति तरंग' मे लिखा 'अगुलिन के होता जानि' ॥ १० ॥

[५९]

मोहत पलक हिय परत पलक नहि
आरती झलक हिय तिमिर भगावती
भवन जगमगात हुलसत राम गात
जोति मनहु राम रंग जगावती

पलक उतपन्य [उतपन्न] भये। हिय परत पलक नहि हृदय के नेत्र की (पलक), वा हिय औ पलक दूनौ, टकटकी (लगाये हैं) अत्यन्त सोभा देखे। हिय तिमिर अविद्या मोहादि। जोति मनहु राम रंग अति तेज (ही) स्याम ॥

सहस किरन जनु करत प्रदच्छिन
साचो ध्रुव जानि देव मतिहि पगावती
जीवन धन वारि वारि राम आरती उतारि
साधु रसना पद प्रेम को लगावती १

सहस किरन सूर्य। ध्रुव और तारन से जो अचल, पै सूक्ष्म चाल (उसमे भी) जैसे खूँटी; (यद्यपि खूँटी के ऊपर के केवल) चक्रादि (ही) घूमै हैं (तथापि) थोरिक उहाँ [कील, खूँटी भी] हिलतै है; तैसे जो अमर, सोऊ बहुत काल मे विनास पावत (ही है)। अविनासी (तो केवल) रामै जेहि के संकल्प से सब होत औ नास पावत। पगावती रिझावती। जीवन धन सब धन से अमोल। साधु नाम जपादि साधन करैया। साधु रसना (अ) श्लील (वचन) से जो बची। पद चरन ॥ ११ ॥

[६०] टोडी

सुष बिश्राम करौ प्रभु आई ॥
ससि सो धवल पलंग बन्यो मन मृदुला बसन बिछाई ॥

सुष बिश्राम० सुख से। मृदुता कोमलाई, बसन गद्दी ॥

१—केवल ख संशोधन मे

श्रुति तकिया सुधरम सित चादर श्रद्धा चँवर ढुराई
राग द्वेष मस दंस न लागहिं बहै पवन सुषदाई ॥

श्रुति तकिया जेहि मे सर्व सिरोमनि विद्या। सुधरम उजल धर्म-सतो गुनी। सित चादर ऊपर कै वस्त्र। श्रद्धा चँवर धर्म मे श्रद्धा भये, असत दूर करव धर्म से चँवर ॥ बहै पवन जेसे ई—(राग द्वेष रूपी-मशक, दंश) दूर होत ॥

सुजस सुगंध क्षमा घन छाया चंदन भूमि सिचाई
सिद्धि चूहरी की गम नाही बीर बिराग तकाई ॥

सुजस सुगंध फैलै कै साम्य [यश और गन्ध दोनो फैलते है अतः साधर्म्य] क्षमा घन छाया क्रोधं ऐसेउ बड़े ताप के हरे से ॥ चूहरो चमारी आदि। तकाई पहरा देत ॥

भोजन के परिपाक होन लगि मुनिन्ह नीति असि गाई
कर जोरे बिनवत ब्रह्मादिक देव करै सेवकाई १

मुनिन्ह नीति असि गाई वेद आदि। देव देवता औ राजा ॥ १२ ॥

[६१] सारंग

प्रभु की आरति सज्जन साजैं ॥
धोई नयन जुग कर दरपन लिय मुष तांबूल बिराजैं ॥

सज्जन भले लोग ॥

बिहित सलाका से आँषिन मे सुरमा अंजन आँजैं
केसर भाल लसै अंगन मे भूषन अंबर भ्राजैं ॥

बिहित सोना आदि (शलाका के लिये जिसका बिधान किया गया है) सुरमा अंजन सुरमा नामक जो अंजन वा सुरमा [शूर] के जोग जो अंजन ॥

बिरदावली पढत बंदीजन मृदु धुनि नौबत बाजैं
जय जयकार होत नभ मंडल द्वारे हय गय गाजैं ॥

बिरदावली सूर्य-वंश मे इक्ष्वाकु भगीरथादि के मुख्य जस ॥
नभ मंडल जो देवता (प्रभु) चरित देखै कै लालची ॥ १३ ॥

अगर धूप बहु मह मह महकैं पाप दोष दुष भाजैं
बर्षहि देव सुमन या छबि की को करि सकि है दाँजैं १

वाल्मीकि ... संस्थान ... श्री

[६२] धनाश्री

आवत रघुनायक खेलि सिकार ॥

तुरगन चढे धनुष सर हाथन कमर त्रोन तरवार १

त्रोन[1] तरकस ॥

नील रंग को बागा पहिरे भाइ सषा परिवार
संग अहेरी कमठा बाँधे देत जात ललकार २

नील अति[2] हरित ॥

भूपति जोगी सायक साधन मन बन मृग है मार
ताहि जीति नृप राज करत हैं मृगया को यह सार ३

सायक साधन जोग के। मन बन मनै वन, जेमे सब चंचल भयंकर (कामादि हिंसक जन्तु भरे[3]। मार कामादि ॥

ताहि जीति० जब आन्तर विजय होई तब सूक्ष्म, स्थूल आपै बनी। सार तत्व ॥

फहरत ध्वज डंके घन गाजत करत नकीब पुकार
आये राम देव तब जननी लेय आरती उतार ४

ध्वज कचनार चिह्न वाला। डंके घन गाजत वादर से, वा घने [गम्भीर घोष से]। नकीब पुकार वंस-विरद वृद्धि ॥

[६३] गौरी

राम आरती होन लगी है
जगमग जगमग जोति जगी है ॥

कंचन भवन रतन सिंघासन
दासन्ह डासे झिलमिल डासन
तापर राजत जगत प्रकासन
देषत छबि मति प्रेम पगी है १

जगमग झल झलाती। (जगमग का) अन्वय जोति औ रूप (दोनो) मे ॥

१—क मे-मूलपाठ कुछ अशुद्ध है 'तुरगन चढ़े धनुष रहा न भाय सखा परिवार' ॥ १४ ॥ २—क मे नही। ३—ख मे नही ॥

झिलमिल चमकीला। जगत प्रकासन जगत के (तथा) जगत मे प्रकास करैया। प्रेम पगी है और साधन से हटि॥

महकत धूप बरत महताबी
झलकत कुंडल रबि छबि दाबी
अंग अंग सुंदरता फाबी
आनँद की सरिता उमगी है २

धूप सुगन्ध दसांगादि से जो बने। महताबी चन्द्रजोति, आदि नाम, (तथा) छोटे बड़े से नाम भेद (भी) प्रकास गुन लेइ। झलकत कुंडल रबि छबि दाबी प्रतीपालंकार। फाबी जथा योग्य। आनद की सरिता उमगी है पूरि[1] उमगी है॥

घंटा घरी मृदंग बजावत
नूपुर पग भरि नाचत गावत
पूरत संषहि चँवर डोलावत
सुनतै दूरि बलाय भगी है ३

घंटा घरी मृदंग ० आरती समय सुखद सब वाद्य। बलाय आधि व्याधि भव रोग लै [पर्यन्त]॥

रूप देषि जननी हरसत हैं
अँजुरिन देव सुमन बरसत हैं
करि दंडवत चरन परसत हैं
सुमति राम के रंग रँगी है ४

जननी हरसत हैं वात्सल्य से। देव सुमन ० देवता लोग, वा, पारिजात (पुष्पादि) नन्दनादि (देव-कानन) के (बरसते हैं)। सुमति स्वच्छ (मति)॥ १५॥

[६४] हंमीर कल्यान

अवसर नाहीये मिलै लगोई रहै दरबार॥
बहुत राति गय भूपे होईहैं बार बडे सुकुमार १

१—क मे नही॥

लगोई रहै दरबार ० ओज ॥ बहुत राति गय भूषे० वात्सल्य उक्ति कौसल्या जी (की) ॥

द्वीप द्वीप के भूपति आये कसमस ठाढे द्वार
दिन नहि चयन रयन नहि निंद्रा न्यावहि को रोजगार २

द्वीप द्वीप के भूपति० ऐस्वर्ज, साम्राजता। न्यावहि को रोजगार० नीति पटुता, जो मुख्य धर्म राजन के ॥

तब पठये कौसल्या मातहिं श्रुति बंदी जन चार
नाथ भई बेरा ब्यारी की असि तिन्ह कीन्ह पुकार ३

श्रुति बंदी जन चार चार वेद सोई बन्दी, वा जो[1] श्रुति के बन्दना करैया सोई बन्दी—वेदोपासक वैदिक (आदि) ॥

सवा पहर मे निसि भोजन है आगे असुर अहार
यह जिय जानि उठे श्री रघुपति देवन कीन्ह जोहार ४

सवा पहर मे निसि भोजन सायं प्रात गृहस्थ कै भोजन ॥
यह जिय जानि ० सास्त्र मरजादा। देवन देवता औ राजन ॥ १६ ॥

[६५]

जननी मुष को देषि रही
कुछ नहि जाय कही ॥

सजि आरती उतारन लागी आनँद थोर नही १

जननी मुष को देषि ० अति अनन्द से ॥

जय जय राघव रवि ससि कुंडल सोभा अधिक चही
मुक्ताहार बिराजत मानहु गंगा धार वही २

रवि ससि कुंडल सोभा अधिक चही ० (यद्यपि रवि शशि के समान दोनो कुंडल) तेज औ आह्लाद कै अवधि, (तथापि) एतनो (गुण) करि थोर। जौ (इस अवधि से भी) बहुत होंहिं तौ उन अंगन के शोभा के समीपता के जोग होंहिं।

१—'ख' मे नहीं।

मुक्तहार[1] मुक्तन कै औहार [अवहार] सेना—अवहार रीति, जैसे भारत मे'—{ 'ततोऽवहारं सैन्यानां मम तेषां च भारत' } ॥

सब [भगवान के पूरे विग्रह] के सुमेर मानि (रवि और शशि) कुंडल भाव से प्रदक्षिणा (की तरह करते हैं), औ (मुक्ताहर मानो) गंगा (की) धार बही ॥

जय जय सुंदर नयन चरन कर नष सिष चारु सही
जय जय ललित बिचित्र चरित प्रभु कीन्हि सोहागिनि मही ३

नयन चरन कर० नयन, चरन, हाथ (आदि) मुख्य-मुख्य (अंगो के निर्देश से समस्त) नष सिष अंग कहि गए। वा, वागा [परिच्छद] सहित ध्यान से एतने (ही अंग) खुले ॥ **जय जय** हर्ष मे वीप्सा। **ललित** सोभित। **बिचित्र** अजूबे। **बिचित्र-चरित-प्रभु** विचित्र चरित के प्रभु, वा, सम्बोधन (प्रभु का)। **कीन्हि सोहगिनि मही** दुष्ट जेके तहस नहस करत रहे अनाथ की नाईं। भू देवी (पत्नी रूप से) ख्यातै ॥

करि आरती करावत ब्यारी माषन दूध दही
जूठन चहत देव इंद्रादिक जन्म सुफलता लही ४

माषन दूध दही (ऐसे मक्खन, दूध तथा दही) षटरस जेसे रसीले। वा, माखनै दूनौ [दूध-दही] कै ॥ **जूठन चहत** ० जेहि के प्रसादै से सब सुफल ॥ १७ ॥

[६६] कामोद

पँवढौ प्रभु आई
जोगिन के मानस मे आनँद सेज बिछाई ॥
चारिउ बेद पलंग के पाये अंग उपंग सहाई
पराभक्ति ठकुराईनि बिलसै सिर तकिया सुधराई १

अंग (वेदांग) छ :—शिक्षा १, व्याकरन २, छंद ३, निरुक्त ४, जोतिष ५, कल्प ६। उपंग उपांग चार :—पुरान १, न्याय २, दूनौ—पूर्व (तथा) उत्तर—मीमांसा ४,। सोई [वेद के अंग तथा उपंग] सीरो-पाटी, तान, कील, काँटा, [1]नेवार ५ बिछौना ६[1] ॥

१—केवल ख संशोधन में।

पराभक्ति जेहि के ग्यानादि साधन। सिर तकिया सुधराई [१]परा भक्ति ठकुराइन विलास करै है सोई सिर तकिया। वा, 'सुधराई' सुन्दर धारना सोई सुन्दर तकिया[१] ॥

कोऊ बुद्धि पलंग बिछावत पाये चारि उपाई
तहाँ परा बिद्या ठकुराइनि अनुभव रस सरसाई २

चारि उपाई साम दानादि ॥ **परा बिद्या** ब्रह्म [१]विद्या[१] ॥

ब्रह्मादिक की गति जहँ नाही पवनौ जहाँ न जाई
भक्ति सहित तहँ सुष से सोवहु जगमग जोति जगाई ३

पवनौ (जो) गर्भ के जीव कै उतपादक, रक्षक—उपनिषध्र मे लिखा। जेहि के साथ (गर्भ मे जीव) आवत, जगत पिता (उस पवन को) नारदादिउ (पिता) मानि ब्रह्मा के पितामह कहे—'सांख्य तरंग' (अध्याय ५ 'प्रचलितोऽन्तर्मारुतः…') औ विष्नु सहस्र नाम (परिचर्या) मे लिखा ॥ **भक्ति सहित०** पहिले जो (भक्ति) ठकुराइनि कहि आये ॥

प्रबल बिराग जहाँ को पहरू सिद्धिउ नहि नगिचाई
शयन आरती होन लगी है देव करत सेवकाई ४

प्रबल की—'सिद्धि बहुत लै रहत, लेस ब्रह्म लै' रामायन परिचर्या आरन्य कांड लछिमन राम संवाद (([१]आरण्य काण्ड[१])) 'कहिअ तात सो परम बिरागी। तृन सम सिद्धि तीनि गुन त्यागी' एहि चौपाई की व्याख्या मे भले :—"और जोनि के सहज धर्म एहि योनि मे सिद्धि कहावत हैं—जैसे वाक् सिद्धि देवन का सहज धर्म है, आकास गमन-पंछिन का, सो (पूर्व योनि का सहज धर्म) नर योनि मे सिद्धि है। तीनि गुनन के रूप सुनो :—सत, चित, आनन्द एकठे रहै तौ ब्रह्म नाम होई (और यादि) तीनउ जुदा रहहिं तौ क्रम से सत्व, रज, तम परत है। तीनउ गुन तजे से तीनउ लोक के ऐश्वर्य तजे जात है, याते विरागी (को) ब्रह्मरूप का अधिकारी जानियै।

संका :—तीनि गुन मे सिद्धिउ आइ गई (फिर) जुदा सिद्धि काहे कहा ?

समाधान :—ब्रह्मत्व सिद्धि के त्यागै हेतु। उहौ रूप सिद्धै [सिद्धियै = सिद्धिहीं] है—यह [ब्रह्मरूप को] जानत नाही रहा है, तेहिते (उस ब्रह्मरूप के ज्ञान को) सिद्धि कोउ कहौ—यहि वदे जुदा 'सिद्धि' पद कहा[१] ॥ १८ ॥

१—केवल ख संशोधन में।

शयन आरती　　　　[६७]　　　　कामोद

जगमग जगमग आरति कीजै
रामरूप हिय मे धरि लीजै ॥
सब ग्यानन की जोति जगाई
जुदा जुदा फिरि एक मिलाई
तेहिं मूरति सो अलष लषाई
जेहि सुमिरत हिय को तम छीजै १

सब ग्यानन की० अनुमान, दृष्टान्त, सिद्धांतादि (के द्वारा) प्रकृति पुरुष ((जैसे)) (एक ही ज्ञेय हैं), जैसे 'शिवचरन परिचर्या' स्त्रोत्र ५८ से औ ६० परजंत-षट् शास्त्रादि औ दूसरेउ छ [दर्शन], तिनसे जो ग्यान जगा, औ एक एक मे अनेक ग्यान भेद (सब) जुदे जुदे ओही के बखानै वाले, औ जेहि के जानै हेतु बनें। **फिरि एक मिलाई** समीकरन करि प्रत्यक्ष मे जो विरोध सा झलकै है, कि कहवैया सबके बड़ेहि लोग, जिनके वचन हम लोगन के बदे तुल्य मानि [मान्य], तौ एक कै उपमर्द एक से कैसे सधै। **तेहिं मूरति से अलष लषाई** जिनके-जिनके जो सिद्धान्त (उन सबको) एक मिलाए सर्वांग जानी। तम-भ्रम ॥

अंग अंग प्रभु के पहिचानी
तिन्ह मे अपने अंगन सानी
दास भाव दिढ मन मे आनी
तन मन धन अर्पन करि दीजै २

अंग अंग प्रभु० जैसे स्पष्ट—'समीकरन प्रकरन—पद्धतिपरिचर्या' औ 'विवृति' के उपद्घातौ मे, औ 'उपासना सर्वस्व' सवैया 'दसई मे:—

"निज कारन मे धरि कारज को तब जीव मिलै हरि अंसन मे,
अति चित्र विचित्रत पंछिन को तजि हंस मिलै जस हंसन मे ॥
यह जीवन मुक्त दसा वरनी जस व्यास कही श्रुति वंसन मे,
विषमत्व मिटै सायुज्य यही जनि भूलहु भंड प्रशंसन मे"[१] ॥

दास भाव दिढ० दास भाव जबर भए सब स्वामिहि कै—आपन (भी वस्तु यह) मानब बनी। (जैसा) ऊपर कहि आए—'तिन्ह मे अपने अंगन सानी' (इस तरह)

१—केवल ख संशोधन मे ॥

बिदेहै रही। **तन मन धन अर्पन** ० एहि रीति से। वा, तन मे जो मनै रूपी धन-जेहि के तावे सब इन्द्री आदि ॥

सिय मे राम राम मे सिय हैं
गंध भूमि से एकै जिय हैं
दोऊ कल्पित तिय औ पिय हैं
ऐसो राम रसायन पीजै ३

सिय मे राम, राम मे सिय ० अन्योन्याश्रय। **गंध भूमि से**० द्रव्य (मे) गुन की नाईं। **दोऊ कल्पित तिय औ पिय हैं** बनुआ रूप, (वस्तुतः दोनो एक ही है) ॥

जाकी छबि सो जगत छबीलो
जाके रस से जगत रसीलो
जाके गुन से गरुअ गभींलो
जानि देव सो जुग जुग जीजै ४

इति राम सेवा

जाकी छबि सो० औरन मे छवि नाहीं (क्योंकि) सब रहतै शरीर अपावन औ श्री-हत होय जात—जेहि (सीताराम) बिना। **जाके रस से जगत रसीलो** असार संसार। **जाके गुन से**० सब (संसारी वस्तु) जड़, तुच्छ; गुन-पुंज (केवल) उहै। **जानि देव सो जुग जुग जीजै** जेहि के जाने अमृत { 'तमेव विदित्वाऽतिमृत्युमेति' } ॥ १९ ॥

इति राम सेवा।

अथ सीताहनुमत् संबाद [६८] *काफी*

कर जोरे हनुमान षडे हैं ॥
सीता राम चरन पंकज मे सार जानि सब भाँति अडे हैं

अथ सीता हनुमत् संबाद

सीता राम चरन पंकज सीता औ राम (के) जुगुल चरन मे सार जानि औ (बाकी सब) असार बूझि। **सब भाँति** मनादि से। **अडे** दिढ़ पकड़े ॥

बलनिधि गुननिधि औ बिद्यानिधि जाके हृदय बिराग कडे हैं
सीता राम भक्ति ताहू मे कंचन मे जनु रतन जडे हैं

बलनिधि बल की खानि। महावीर जो बड़े विजई सोऊ विषयन से हारे (परन्तु) ए बाल ब्रह्मचारी (होने से) उनहूँ के जीते। **गुननिधि** सुग्रीव के जगावै औ सुरसा के छेकै (तथा) गान [संगीत शास्त्र] मे हनुमत मत ख्यातै। (तथा अन्य) अनेक स्थलन मे (भी उनके) गुनौ के (परिचय प्राप्त हैं)। औ **बिद्यानिधि** सर्व वेद वेदांग सूर्य आदि से पढ़े (तथा) (जिसे) [1]सरकारौ (स्वयं) वषाने[1]। **कडे** दिढ़ औ 'कड़ा' जो लदाव देइ घर बनत ॥

सीता राम भक्ति० कंचन से कड़े मे सीता-राम-भक्ति के मनि रत्न बढ़िया जड़े हैं ॥

सकल बासना गलित भई है मानहु द्रुम के पात झडे हैं
अब नव पल्लव लागन चाहत ऐसे भाग भले उघडे हैं ३

कैसे होय कै की :—सकल बासना चाह गलित नष्ट। **द्रुम के पात झडे हैं** ज्ञान वैराग के झकोरे से ॥

नव पल्लव अनुराग औ अनुभव (रूपी)। ऐसे भाग भले० ❀ ❀ ❀ ॥

रामचंद्र बोले सीता से ए उपकारी मोर बडे हैं
मोर हृदय उपदेसहु इनकहँ प्रेम समुंद्र सुनत उमडे हैं ४

हृदय तत्व ॥ प्रेम समुंद्र सुनत ० प्रभु की ऐसी कृपा देखि हनुमान जी औ जानकी जी के ('प्रेम समुद्र') ॥ १ ॥

[६६] होरी

हनुमत कहँ उपदेस
श्री जानकी करत हैं ॥

कँकरिल कूई मटी का भाँडा कबहीं लगैगी ठेस
ऐसे तन का कौन ठेकाना जहाँ न सुष लव लेस १

हनुमत कहँ उपदेस० केहि रीति :—कँकरिल कूई अन्ध कूप संसार, काँकर (रूपी) जेमे अनेक तरह की बाधा। **भाँडा** पार्थिव घट-देह। **लगैगी ठेस** सर्पादि जन्तु, अग्नि, जलादि (तथा) अनेक रोग (के व्याज से) ॥

जहाँ न सुष० माने है :—अग्य रहे पान पान पिकिर, पीछे [युवावस्था मे] विषयन (तथा) धनादि बटोरै-अगोरै। त्यागिउ बने-वासना बनी (ही रही, केवल)

१—केवल ख मे पार्श्व पर ॥

वेष की लाज (से आडम्बर मात्र) । (सम्पूर्ण जीवन भर) ऐसेहि सद्-असद (कर्म) लगे । लव बहुत थोर ॥

करना होय सो करले अबहीं काल धरे है केस
आई अचानक मारिहै वह घर मे या परदेस २
षेलत षात हसत औ बोलत जात जन्म यह षेस
जनमत मरत मरत पुनि जनमत होत न हेस न नेस ३

षेस खीस, छीन ॥ जनमत मरत० कर्मानुसार । हेस भाषांतर (मे) 'अस्ति' कै (बोधक) जो जामिनी भाषा मे 'हस्त' । नेस नास्ति औ 'नेस्त' जामिनी भाषा (मे) ॥

कहौं जगत गति और विषय गति पराभक्ति रस बेस
जो सुनि राम चरन रति उपजै मिटै सकल कवलेस ४

जगत गति रूप औ चाल । विषय गति स्वाद । पराभक्ति जेहिके साधन मे करम ग्यानादि । बेस अधिक, सच्चा । 'वेस' (का अर्थ–) रूप–संस्कृत (मे) औ 'अधिक' जामिनी (भाषा मे) ॥सकल कवलेस [1]तीनौ तरह के दुःख[1] जनन मरनादि ॥ २ ॥

[७०] होरी

पै भेद न पावैं
झूठ जगत अस गावैं ॥

लय उतपत्ति देषि या जग की झूठो अस ठहरावैं
सत्य असत्य उभय श्रुति बोलत तामे वाद मचावैं १

लय नास । उतपत्ति पैदा । झूठो अस ठहरावैं (जगत की लय तथा उत्पत्ति होत देखि—जगत—झूठ—अस ठहरावत हैं ॥ सत्य असत्य उभय श्रुति बोलत वेद मे जगत सांच औ झूठ दूनौ लिखा । बाद मचावैं एक एक पच्छ लेइ ॥

भयो सत्य ते झूठ जगत किमि कोउ असि युक्ति बनावैं
वह उपनिषद बिचारे बिनु भल नाना पंथ चलावैं २

भयो सत्य ते झूठ जगत किमि ० (क्योंकि) जैसी जरि तैसी साखा चाही ॥

१—केवल ख के पार्श्व पर ॥

वह उपनिषद बिचारे बिनु ० उपनिषध मे { तदनु प्रविश्य सच्च त्यच्चा-भवत् । निरुक्तं चानिरुक्तं च, निलयनं चानिलयनं च । विज्ञानं चाविज्ञानं च । सत्यं चानृतं च । सत्यमभवत्, यदिदं किञ्च तत्सत्यमित्याचक्षते । 'असद्वा इदमग्र आसीत् ततो वै सदजायत । तदात्मानं स्वयमकुरुत तस्मात्तत्सुकृतमुच्यत इति'—तैत्तरीय० } ॥

सत्य असत्य उभय मिलि जग यह अकथ कथत नहि आवै
नील पात मिलि हरित भयो जस तासर रंग कहावै ३

सत्य असत्य उभय ० दूनौ मिले न साच न झूठ कहाय सकत ॥

नील पीत मिलि हरित ० द्रिष्टान्त ॥

सत्य असत्य उभय पद कहिकै जग को अकथ लषावै
जैसे पूरन देव अकथ है यह मत मन मे भावै ४

अकथ कैसन, का ? (यह) न कहि जाय ॥ पूरन देव अकथ है पूर्न जो देव । वा, पूरन औ अकथ । वा, पूरन अकथ । यह मत मन मे भावै ऐसे सिद्धान्त—हेतुः—जगत असत्य मानै तौ सत कै अंस-कला कैसे बनै; जौ सत मानै तौ असत के बनो ? (अतः) जैसे ऊ [ईश्वर] अकथ तैसे जगतौ ॥ ३ ॥

[७१] होरी

कोउ कोउ यह लषि पावा
जग है राम बिहार ॥

पूरन राम सरूप भावमय जग ताको बिस्तार
एक एक को बहुत देषावत जैसे भाष्य बिचार १

यह लषि पावा 'पहिली विषय' (दृष्टि से)। राम बिहार (कि) जगै मे राम रमे ॥

पूरन भाव मय मूल, सर्वादि कारन, पूर्न भाव मै । बिस्तार फैलाव ।

एक एक का बहुत ० दृष्टांत—मूल शब्द के भाष्य बिचार व्याख्या अपार ॥

भाव बिशेष एक उत्तर शत महाभाव एकसार
नाना भावनतें अस झलकत एकै वह करतार २

१—केवल ख मे संशोधन के रूप मे ।

भाव बिशेष एक विशेष करि कै एक (ही) भाव-प्रश्न रूप । **उत्तर शत** जवाब अनंत । **महा भाव एक** सिद्धान्त (एक)—जो मूल-टीका (मे) फैलि वटुरि ठहरा सो । **सार** तत्व ॥

नाना भावनतें ० बहुत भावन से, जैसे घट से कुलाल कै प्रतीति, पट से पटकार (तथैव) संसार देखे ऊ [ईश्वर] करता [कर्त्ता] (यह) महाभाव [सिद्धान्त] ठहरत ॥

द्वंद्व सकल निर्द्वंद्व लषावत अपनो प्रगटि बिकार
एतो सार बिचारि जगत को नाम भयौ संसार ३

द्वंद्व जोड़ा । भूष अन्न[1]—पियास जल[2], दुख-सुख, पाप-पुन्य, दिन-रात आदि । **निर्द्वंद्व लषावत** एक से एक लड़ाये (जैसे) तेज से तम । ऐसेहिं सब—न ई[3], न ऊ रही । **बिकार** एक से एक बढ़व, जैसे, उख से कन्द [परिष्कृत चीनी] लै ॥

सार तत्व । **संसार** 'भली प्रकार ते भरा है सारांस जेमे' सो ॥

ऐसो नित्य बिलास राम को दासन कों आधार
सकल देव ब्रह्मादिक निरषँहि सत् चित मोदाकार ४

०**नित्य बिलास राम को** (ऐसा) संसार जेहि मे राम रमे ॥ **सत् चित मोदाकार** सत औ चित औ आनन्द (का सम्मिलिति) आकार । जुदा होय तीनौ गुन (सत्व, रज, तम) जो देखात सो उहै [क्रमशः तीनो मौलिक गुण सत्, चित्, आनन्द] ॥ ४ ॥

[७२] होरी

जग ढूँढि रह्यौ है केवल सुष को भाई ॥
कर्म करत सुष ही के कारन सुर नर मुनि समुदाई १

कर्म करत ० यग्यादि से स्वर्गादि (की प्राप्ति) ऐसेहि धनादि लौकिकौ सामग्री जुहावै मे (सुख ही मूल कारण) । **सुर** साधारन देवता, उनहूँ के इंद्र, महेन्द्रादि[3] बड़े पद कै चाह औ[4] जो कर्म करि होत । **नर** अनेक उद्यम (करता है) राज आदि बड़े पदन के पावै हेतु । **मुनि** तपादि (मे) कामना के (अनुसार) उलटा होय लटके, पंच अगिन तापे, जाड़ा जल मे काटे, त्वचादि सुन्दर सुख (की प्राप्ति के लिये) ॥

सत चित आनँद रूप जीव यह तँह माया लपटाई
सत चित मे संदेह नही कछु तिसरो गयो हेराई २

१, २, ३, ४ केवल ख मे संशोधन रूप मे ।

सत चित आनंद रूप० ओकर [सच्चिदानंद-ब्रह्म का] प्रतिविम्ब। (जीव भी) उहै (सच्चिदानन्द रूप)। ०माया लपटाई जेहि (माया रूप) पट से आपन रूप नाहीं देखात ॥ तिसरो० आनन्द ॥

चित आनंद पंष दोऊ सत के ऐसी समुझि न आई
ताते व्याकुल होय फिरत है करत अनेक उपाई ३

चित आनंद पंष दोऊ सतके आन्योन्याश्रित। तीनौ मिले गुनमात्र—निरगुन; जुदा भये त्रिगुनात्मक त्रिमूर्त्ति ॥ ०करत अनेक उपाई आनन्द पावै की; औ विषयादि मे लेस मात्र (आनन्द) देखि भूलत ॥

चित साधन आनंद सुफल है सत्य मूल ठहराई
सोई राम अवधि मे राजत सीता लषन सहाई ४

सत्य राम, चित-सीता, आनंद लछिमन ॥ ५ ॥

[७३] होरी

बिषयौ नहि पहिचाना
बिरथै लपटाना ॥

विषय किये सुष होत सही पै तैं कारन का जाना १

दूसरे प्रश्न ['विषय गति' पद ७०] कै उत्तर :—बिषयौ नहि पहिचाना लपटा (नी) तो वे चीन्हे ॥ बिषय किये० सुख तो जनात, पै हेतु ओकर का ! तैं हे कपि ॥

अंगन मे सम भाव भये ते मन बहुरत बहिराना
सो सुष विषयन से भासत है यह केवल अग्याना २

अंगन मे सम भाव भये ते आलिंगनादि। मन बहुरत बहिराना और जगह से ॥ बिषयन से ० जैसे—सुरा, जूआ आदि (विषय में) एकै मे मन लागत, साथिउ [साथी का भी] वोही रस मे। भास भ्रम वाला ग्यान—रसरी में साँप अस। यह केवल अग्याना कि विषयन से सुख (की उपलब्धि) ॥

चिंता मे न विषय सुषदायी एहि ते करु अनुमाना
मनथिरते से सुष उपजत है मन चटोरु नादाना ३

चिंता मे न बिषय सुषदायी कि अचल नाहीं। अनुमाना अनुमान—बुद्धि मे ठहराइब ॥ मनथिरते से सुष सिद्धांत (कि) 'सुख मनै बद्धे' ॥

थिर मन मे रामै झलकत हैं जल मे मुष जस माना
सुष सरूप देवै को सुष कन विषयन मे छितिराना ४

थिर मन मे० थिर जल के साफ (रहने) मे जैसे ठीक मुख देखात तैसेहि मन मे रमैया (भी स्थिर स्वच्छ मन मे) ॥ **सुष सरूप** ० सुख सरूप देवै, तेकर **कन**-किनका (उन विषयो में) जिनमें (सुख) मानत **छितराना** फैला (है) ॥ ६ ॥

[७४] होरी

राम चरित्र निमाना
कपि मही कियो है ॥

राम जनम से आदि लेइकै राज करन लगि नाना १

निमाना निर्मान—[1]हरियाए आदि की भाषा[1] (की तरह) ॥
राम जनम से ० सीतै कै चरित श्रीमत् रामायन आदि मे ॥

अचल अकर्म सकल घटवासी राम रूप नहि जाना
मोरौ रूप न नीके परिषा तिन्ह रामहि कर माना २

अचल ब्रह्म-राम, और सब चल—थिर नाहीं। **अकर्म** निर्लेप, कि सत् असत् दूनौ लागे भोगब (अतः सबसे निर्लिप्त)। **सकल घटवासी** व्यापक। **रामरूप** ऐसा [उपर्युक्त गुणों से युक्त]। **मोरौ रूप** प्रधान [प्रकृति] ॥

राहु छाँह से चंद्र स्याम जस मै भइ राम समाना
राम छाँह से चेतन होइकै कीन्हे विविध विधाना ३

राम छाँह से चेतन होइकै ० (सीता जी कहती है कि 'माया' अर्थात् मुझमे सृष्टि के विविध विधान की शक्ति) है नाही, (तथा अपनी) उपाधि [जड़ प्रकृति] से (भी) करत नहीं। पै (मै) जड़ ('राम छाँह से') चेतन होय, जैसे, अंध पर पंगु चढ़ि सब काम करावत ॥

जल मे रवि जस राम मोरे मह सुदरस तेज निधाना
पराभक्ति तब सुष से बनिहै घट घट देव समाना ४

तेज निधाना तेज कै खानिहिं। **सुदरस** (जो) सुख से देखाय, 'रामायन परिचर्या' में भले—'साक्षात सूर्य के देखब दुस्तर (पर) जल मे सोई सुख से'। तैसे **मोरे मह** प्रधान सीता में ॥

१—केवल ख में संशोधन रूप मे ॥

परा जेहि के साधन में ग्यान; (वह हो) तौ सबमे व्यापक (राम को) आप सेवक बनि देखी। इहै 'परा-भक्ति' 'रामायन परिचर्या में[1] ॥

[७५]　　काफी

अस हनुमंत बिचार करत हैं ॥

रामचंद्र पूरन छबि सीता दीनन्ह के परिताप हरत हैं १

रामचंद्र पूरन सोरह कला निधान। **छबि सीता** जोन्हैया। **दीन** ग्यानादि पूँजी हीन ॥

सीतै राम रामै हैं सीता दोऊ एकै देषि परत हैं
दोऊ जग तारन की सीमा केवल प्रेमहि पाय ढरत हैं २

सीतै राम, रामै हैं सीता पुरुष प्रधान मे भेद नाही, कि एकै—दुई भाग भया ॥
दोऊ जग तारन की सीमा 'सीता राम' मे 'सी' 'म' (सीता का 'सी' तथा राम का 'म' = सीम) प्रथम, चतुर्थ वरन; बीच मे (तारा) तारै। **केवल प्रेमहि०** और साधनन से ऐसे नाहीं ॥

आदि सियहिं मोहि नहि उपदेसा भेद भाव यद्यपि न धरत हैं
छायहि से उपदेस करावा कीधौं कपिता देषि डरत हैं ३

आदि सियहिं ० राम जो—तेज निधान—कहि आये ('मोर हृदय उपदेसहु इन कहँ' पद—६८) ॥ **छायहि से ०** जानकी प्रधान द्वारा, (क्योंकि स्वयं) अलख (केवल अपने) लीला से लखात। **कपिता** पशुता, जड़ता 'चांचल्य' ॥

यह बिचारि चितवत रघुबीरहि मनमहँ राम नाम सुमिरत हैं
अंतरजामी जानि हिये की आपुइ देव बचन उचरत हैं ४

चितवत कायिक (रूप से) **मनमहँ** मानसिक, **सुमिरत** वाचिक ॥
अंतरजामी व्यापक, 'कूटस्थ साक्षी' ॥ ८ ॥

[७६]　　काफी

सुनु हनुमंत ग्यान धन मेरो
जाहि बिना सब जगत अँधेरो ॥

जीवेश्वर दुइ आतम गाये जीव तहाँ इश्वर को चेरो
देह भयो दूनौ की टीका यातें सो बिग्रह कहि टेरो १

१—केवल ख मे संशोधन रूप मे ॥

सुनु हनुमंत ० रामजी कहै हैं—ग्यान मेरो धन । **जाहि बिना सब** ० सूर्य की नाईं जो [ज्ञान] प्रकास करैया ॥

जीवेश्वर दुइ आतम जीवात्मा परमात्मा । **गाये** कहे (गये) । **जीव तहाँ इश्वर को** ० पै तहाँ जीव ईश्वर के आधीन ॥ **देह** जीव—ईश्वर (का) प्रतिबिंब, औ जीव कै नकल देहँ । तेसे **बिग्रह** 'बिंब' दुइ, 'ग्रह' ग्रहन करै, दुइ कै—जड़ चेतन कै—धर्म जो लेइ । **देह भयो दूनौ की टीका** 'मूल' ईश्वर (का) 'जीव'—अंस—सूक्ष्म व्याख्या [१]'सूत्र सी'[१] । देह स्थूल टीका जैसे मूल के भाव कठिन अलष, व्याख्या से खुलासा जनात ॥

उदित प्रथम प्रतिबिंब ईश है तामे कछु नहि तम को डेरो
आगे कोटिन्ह प्रतिबिंबन मे जस अंतर तस तम को घेरो २

(जीव तथा ईश्वर मे) भेद :—**प्रथम प्रतिबिंब ईश है** जो परात्पर, सब कारनन कै कारन—तेकर प्रतिबिंब पहिला—'ईंश' (जिसे भक्त) निज मतानुसार ब्रह्म, विष्णु, आदि नामन से माने । **तामे कछु नहि तम** ० सुद्ध ग्यान प्रकास मै [मय] उआ [उगा] ॥ **आगे कोटिन्ह** ० सृष्टि क्रम मे **तम** अग्यान । **घेरो** आवरन ॥

सोई तम माया कहि गाई रचत जीव गन बिबिध घनेरो
तम अनुसार कर्म तव लागे एहि बिधि माया जीवहि पेरो ३

सोई तम माया अज्ञान परदा । **रचत जीव गन** बहुभाँति के ॥ **तम अनुसार कर्म** ० बिंवी [ईश्वर] अकर्म । **एहि बिधि माया** ० (जीव) के कर्म भोगै मै (कारण) ॥

जडि उपाधि की अंतरतम है ताहि तजे जो रहत बडेरो
जीवेश्वर ते पृथक तीसरो अवधि देव सो जगत उजेरों ४

उपाधि जनन-मरनादि ०**तम** मायिक अज्ञान । **ताहि** उहै तम । **तजे जो रहत** (अर्थात्) ग्यान, प्रकास रूप । **बडेरो** बिंब ॥ **जीवेश्वर ते पृथक** ० जैसे श्रुति मे लिखा, कि—'ब्रह्म महीं नाहीं, ब्रह्म महीं हौं' । **अवधि देव** राम,—'अवधि' हद्द, 'देव' स्वामी । [२]**सो जगत उजेरो**[२] (जो) जगत कै अँजोर, वा जेहि से जगत उजेरो ॥ ६ ॥

[७७] कँहरवा

नाचि उठा कपि सुनि प्रभु बानी ॥
यह गति षोजत मुनि बर ग्यानी
बिनु प्रभु कृपा जाय नहि जानी १

१—क मे नही । २—ख मे यह, प्रतीक रूप में नही है ।

नाचि उठा कपि ० अति हर्ष से ॥ **मुनि** मनन सील औ मौन । **बर** श्रेष्ठ । **ग्यानी** जनैया ॥ **बिनु प्रभु कृपा** ० जद्यपि जोग ग्यानादि साधनौ (पर) मुख्य कृपै ॥

ग्रंथन के झगरा उर आनी
मति भरमै दिन दिन हितहानी २

ग्रंथन के झगरा ० जैसे 'उपासना सर्वस्व' छठईं सवैया मे—

[1]"श्रुति नित्य सही सबके मतमे पै संशय एक तहाँ उमगै ।
धुनि बाग भये पर होत सदा तस बुद्धि भये पर अर्थ लगै ॥
श्रुति नित्य कहौ कैसे बनि है मुनि ग्रंथहु मे दुइ वाद जगै ।
श्रुति नित्य रहौ अरु वाद मिटै असि राह बनै तब बुद्धि पगै"[1] ॥

'मुनि ग्रंथहु मे दुइ वाद जगै' भाव (दोनो) प्रमानै (अतः) श्रुति–आर्ष मत लेइ बाद (अयुक्त) कि एक कै प्रमान लेब (और) दूसरे कै उपमर्द कठिन (क्योंकि) वही जुक्ति से दुसरेउ पच्छ कै खंडन होई । (यह विरोधाभास) तीनौ कांड वेदौ लै—'कृष्न सुधा'—एकसै सडसठ (१६७) के पद मे भले—'श्रुति एकै बात कहत कस न'[2] ॥

मति भरमै नाहीं ठहरत । **हितहानो** कि ओहो [मति की स्थिरता] से आपन कल्यान ॥

सहजहि तरत चरन रति मानी
माझधार बूडँहि अभिमानी ३

सहजहि तरत ० (प्रभु) चरन मे प्रीति परम गति (का) साधन ॥
माझधार मोह नदी (के) । **अभिमानी** तन, ग्यानादि अहंकार (से युक्त) ॥

मन पोटो पावत हयरानी
तुम्ह तौ देव दया कै षानी ४

मन पोटो ० जैसे बट्टा वाला सिक्का गली गली फिरत ॥ **षानी** जेहि मे बहुत (पहले से ही रहैं) औ होय उतपन्य [और उत्पन्न भी हों] ॥ १० ॥

[७८]

मन न थिराइ भँवर अस छटपट ॥
जोगहु से मन होला लटपट
अति चंचल सें उहौ बड अटपट १

१—केवल ख के पार्श्व पर । २—ख मे इस प्रतीक के स्थान पर कृष्ण सुधा का प्रस्तुत सम्पूर्ण, परन्तु पार्श्व पर उद्धृत है ।

छटपट चंचल ॥ **जोगहु से०** जोग मे (मन) थिरावै की रीति—ध्यान-धारनादि, पै **लटपट** लटपट होब (अर्थात्) अरुझाब । **अतिचंचल मन** । **उहौ जो** । **झटपट** कठोर ॥

करतै करत जगत कै षटपट
कोउ न लषै उडि जाय पंछी चटपट २

षटपट लोकोक्ति, (अथवा) 'षट' विकार, 'पट' आवरन—परदा, वा—उनही [षट् विकार] कै ('पट') बागा [परिधान] बनावत ॥

पंछी हंस, जीव । वा—संकल्प-विकल्प—जेहि के दुइ पच्छ (ऐसा) मन ('पंछी') रूपै होइ रहा है । [1]**चटपट** तुरत, वा (जैसे) 'चट' धूर्त नट (जो) 'पट' मे गायब होत[1] ॥

जब जम कै चटकन लागी पटपट
अकबक न चली बिसरि जाई सटपट ३

जब जम कै ० निनैं [निर्णय] समय, कि (उस समय) जीव नटत, (पर) गवाही—इंद्री देवतन—से साबित होत ॥

[1]**अकबक** 'अ' नाहीं, 'क' कथन, 'बक'—विकत्थने—धातु से । **सटपट** ('सट') सटा—जोरा [जोड़ा हुआ] पट । भाव :—निर्नय समय (सब) खुलि जाई[1] ॥

कयल चहसि तौ कइले झटपट
चरन कमल से होइ रहु गटपट ४

झटपट 'झट' झटिति, 'पट' बागा ॥ **चरन कमल से ०** हेतु :—कि चंचल भ्रमरौ कमलै मे बँधत । **गटपट** एक; भाव जैसे पटन की गठरी अनेक एक होत ॥ ११ ॥

[७९]

सोचहु काहे भयल मन चलबल ॥
जौ सुभाउ से मानहु हलफल
तौ काहे के कहेसि श्रुति कलबल १

'चल' चांचल्य, **'बल'** जोर ॥

१—केवल ख मे पार्श्व पर ।

सुभाउ अग्नि-जल-आदि कै जराइब-जुड़ाइब आदि। **हल हल्य कुरूपता,** भावः—मैलाई [अशुचिता]। वा हलफल की नाईं काटब, खोदब (आदि) सुभाव बदलब असाध्य ॥ **कलबल** 'कल' बोध, 'बल' जोर, भाव (अपनी युक्ति) बुझावै की रीति ॥

पवन चढल मन तेसें षलबल
आनकै छूति इहौ तोर गलबल २

जौ मानै **षलबल** 'खल' विकार छ। 'तोर गलबल' तौ आनकै छूति आरोप। **गलबल** मुँह जोरी ॥

जब जिय उठै बिषय कै कलबल
तब बउरहि करै ऊँट जैसे बलबल ३

कलबल खाज, चाह; कला—उद्दीपनादि सामग्री (से) ॥ **बलबल** मस्त होय जो बोली बोलत ॥

जनम जनम कै बाढल मलबल
राम भजे बनै छोडि कै छलबल ४

जनम जनम कै ० वासना—पुरानी (तथा) नई—(दोनों मिल कर) हेतु ठहरत। **मल** पाप, चाह—चंचलता; 'रामायन परिचरजा' जुद्धकांड—चंद्रोदय विचार—'ससि तुम्हार निज दास' यहि (की व्याख्या) मे भले :—

'जगत कै आत्मा सूर्य हैं, औ जगत का मन चंद्र है [वह चन्द्रमा] सूर्य का प्रतिबिंब है। बिंब-प्रतिबिंब से सेवक, स्वामी का नाता प्रत्यक्ष है। आत्मा के तावे मन सदा, एहि प्रकार ते ससि (को) 'निजदास' कहा। व्यवहार मे तौ चंचलता औ चाह ये दूनौ मन मे दोष है—सोई स्यामता (चंद्र मे) भासत है। एतनै जनावै बदे नानाउत्प्रेक्षा कविन की बनी है' ॥

छल जीव औ बुद्धि विचारी कै धर्म नाही। **बनै** एक ठहर लागे चंचलता आदि नाई ॥ १२ ॥

[८०]

तोर भल होइ जौं कहल किछु मनबे ॥
मरमिन से मिलि जब रस छनबे
तब कैसे गुर पोइया एकै मे सनबे १

१—केवल ख मे पार्श्व पर।

कहल किछु मनिबे मानस विचार ॥

मरमी जनैया वा पात्र, [१]'मरमी' मर्म, घाव-प्रेमादि लगन से जो उठा[१] । **रस** तत्व, वा छ शास्त्र । **छनबे** निर्नय विचार, भाव-असार छोड़ि । **गुर** ऊख [१]आदि[१] (का) रस तत्व । **षोइया** असार, जेहि से रस गुन[१] खोआ [नष्ट हुआ] । **सनबे** मिलइबे ॥

रस रस जब इंद्रिन के तनबे
येहि मन मे जगमग तब अनबे २

रस रस धीरे धीरे जोगादि [२](रीति से)[२], वा 'रस' औ 'रस' बारह—दूनौ शास्त्र रीति से ॥ **जगमग** झलझलाती जोति ज्ञान की [१]वा 'एहि मन मे जगमग' (मन ही) जग का मग-मनै से संसार; औ (मन ही) बांधै, छोड़ावै की राह औ संसार से छुटै की । औ संसारै स्वर्ग-नर्क, ब्रह्मलोक मुक्तादि [मुक्ति आदि] की मग[१] ॥

बनत बनत रामै तैं बनबे
तारू गुर लागैदे अपुनै जनबे ३

रामै तैं बनबे तब[१] उन भूमिकन [जीवेश्वर की अभेद स्थिति] ले जाय ॥

तारू गुर लागैदे० जैसे मोठ न जनैया जीभ से तारू मे (गुड़) लगे स्वाद जानी । (अथवा) **'तारु गुर'** तारै वाला गुरु; (क्योंकि) [१]गुरु तौ सब सिषावै वाले—सद-असाद—पै 'तारू' बोरै वाले नाहीं, 'तार'-पार करै वाले भव सागरादिते[१] ॥ **लागैद** कान मे ॥

षनत षनत तरलै जब षनबे
राम रस चीषि दुइ भाव न ठनबे ४ १३

षनत षनत विचारत विचारत । भले मनन (तथा) सत संगौ कै (द्वारा) । **तरलै** हदलै ॥ **रास रस** बेधैवाला, [१]सब रसको रसीला करैया[१] ॥ १३ ॥

[८१]

हनुमत कहत बचन हरषायकै ॥
जरत रहेउँ मै बिष रस पायकै
बाँचेउँ तोर सुधा रस पायकै १

हनुमत कहत ० सुनि, विचारि ॥

१—केवल ख मे पार्श्व पर हैं । २—क मे लिखकर काट दिया गया है ॥

विषय रस षाय विष चढ़े जैसे ताप (होता है) विषयनौ से (वेसे ही), महाभारत, उद्योगपर्व 'सनतसुजातीय'[1] (पर्व) मे 'इंद्री साँप, गोलक बिल, विषय विष काटि बिल मे समात' { 'गूहन्ति सर्पा इव गह्वराणि...' } । सुधा अमृत बचन, वा बिषौ (विशिष्ट औषधियों के) जोग से अमृत होत (जिससे) संबुल [?] आदि, औ (अन्य) परम गुनदाई रस बनत; वा 'सुधा' जल से संबुल विष दबत ॥

न तौ मरतेंउ तन मे लपटायकै
जैसे माछी मकरी के जाल अरुझायकै २

तन मे लपटाय तन्मय होय, दृष्टान्त—('जैसे माछी०') ॥
मकरी मकर जो करै । 'मकर' धंध, पाखंड ॥

केउ चाहउ किछु फल बहुत मनायकै
मै तौ चाहउँ दासपनो बिनय सुनायकै ३

बहुत मनायकै अनेक साधन (से) ॥ **बिनय** आधीनता ॥

देव देव देउ बर इहइ अघायकै
भजउँ निरंतर पद मन लायकै ४

देव देव ईश्वर के ईश्वर, संबोधन । **देउ** देहु ॥
निरंतर (जिससे) बीच न (पड़े) ॥ १४ ॥

[८२]　　　धनाश्री

प्रभु की दासता बड़ि दूर
कोउ पावै भरि पूर ॥

कर्म जोग साधेउँ/साधन ते बनि है ग्यानौ झाँषर झूर
वह तो राम अनुग्रह ही ते मिलै सजीवन मूर १

दासता बड़ि दूर हनुमान फेर विचारि कहत । पहिले पद मे दासतै काहे माँगा, कि 'प्रभु की दासता बड़ि दूर' कोउ पावै जैसन पात्र ॥

कर्म जोग कर्म मे जोग लगब, वा, कर्म औ जोग । **साधेउँ ते ०** जैसी रीति से जो (सिद्धि प्राप्त होती है) **ग्यानौ झाँषर मूर** (ज्ञान) साधै मे झूरे झांषर सा होय, (क्योंकि) विषयादि रस लेशौ न रहै ब्रह्माग्नि भले धधकी; वा ज्ञान (ही) झाँषर मूर नेह रहित ॥

१—क मे 'जनत सुजातीय' लिखा है, जो भ्रामक है ।

राम अनुग्रह ही ते ० दास [1]कर सब[1] स्वामिहि (के) आधीन **सजीवन मूर** अनेक वासना, विषयादि विष करि मरे (हुये को) फेर से भले जियावै वाली जड़ी ॥

चारि मुक्ति जाके पसिगे मे चहत चरन रज/की धूर

अहं भाव को दास बनावत/करै जो परमारथ पथ सूर २

चारि मुक्ति पसिगे मे (जिसकी तुलना मे) स्वर्गादि सुख (पँसगे की तरह) हलुक । **चरन रज धूर** चरन कमलै की धूरि ॥ **अहं भाव को दास बनावत** अहं-दास (मै दास हूँ—यह) विचारतै (दास की) अहंता, दासता[2] मे आई [अर्थात् दास अहंकार रहित हो जाता है ।] **परमारथ पथ सूर** (किन्तु) धर्म भीरु ॥

जो नित अव्यय दास सोई भौ का जानहिगे/जानैगे कूर

कैसे मृग मद गंध लहहि ते जे ढोवत हैं घूर ३

अव्यय अविनासी—'सदा'—बार बार कहे दास कहात । **कूर** क्रूर कोई धर्म मानि (किन्तु) और [अन्य] मे (फँसे हैं) अर्थात् जानिउ कै (भी) अग्य ॥ **घूर** मलादि से जो बढ़ा । जिनके नाम मे दुर्गंध भरी (उनके नाक मे) गंध कैसे आय सकी ॥

दानी दास कलप तरिवर/कल्प साषी सो राम रंग मे चूर

जाके हिय नयनन मै झमके रामदेव को नूर ४

दानो ('दानी' और) 'दास' (दोनो मे) एकै धातु ॥ **हिय नयनन** हृदय औ नयन—भीतर-बाहेर, वा, ('हिय') भीतरै कै (नयन) । **नूर** जोति ॥ १५ ॥

[८३] *बिहाग*

तौ क्या दास प्रभु का हुवा ॥

मूढ जौ तूँ बिषय लंपट कपट करि करि मुवा १

तौ क्या दास प्रभु का ० सेवक स्वामी के अनुकूल चाही । (यह पद) उपदेश जीव के—गुरु शिष्य के रीति (से है) ॥ **मूढ** ज्ञान रहित [3]गवाँर[3] । **विषय लंपट** विषयन मे रत । **कपट** छल ॥

१—क मे—करब ॥ २—क मे—दास । ३—क मे नही ।

विषय सुख पावै औ न छूटै (मे) हेतु :—

कर्म डोरिन बँध्यौ परबस परो जैसे सुवा
मुक्ति दायक संत पद को रंग कबहुँ न छुवा २

कर्म डोरिन ० 'सुवा' (के) दृष्टांत से (अपने) आप से बँधा माने ॥ मुक्ति दायक छुट्टी देवैया । संत पहुँचे । रंग मकरंद ॥

बार बार करार करि करि गिरत फिरि फिरि कुवा
झारि दोउ कर जात जैसे हारि ज्वारी जुवा ३

बारबार अनेक जन्म, औ जन्मै (के) समय से लेई—गिरत फिरि फिरि० बहु बार सुख चाह (परन्तु) दुख पाय । कुवा संसार ॥ झारि दोउ कर ० (दोनो हाथ झार कर, अर्थात्) पिछिलिउ पूँजी खोय ॥

जौन तम को डाँटि जगमग भाग सूरज उवा
देव दुर्लभ जौन मुष पर नाम अंम्रित चुवा ४

तम को डाँटि मोहादि अज्ञान के । भाग सूरज ० जैसे आगे कर्म अँजोर होय ॥ नाम जो सबसे आदि । बहु थल (में जिसकी) बड़ाई लिखि आये । अंम्रित विषयादि विष से मरे (को) फेर से जियावै वाला ॥ १६ ॥

[८४]

रचिक जौ लागन पावै
राम रंग परसंग ॥
तौ छुवतै बीछी का रस ज्यों रोम रोम चढि धावै १

रचिक थोरो, 'बहुत होय तौ का कथा'[1] राम रंग रमै, बेधै वाला-राम सुधा कै परसंग उत्कृष्ट संग वा प्रसंग ॥ तौ छुवतै बीछी को रस ज्यों ० (केवल) तुरत फलै मे दृष्टान्त ॥

हिय समुंद्र तब उमगै भाई आँषिन मे रस आवै
राम झलक मे मगन होइकै राम राम रट लावै २

हिय समुंद्र० उमगै० जैसे चंद्र देखि समुद्र उमगत । आँषिन मे रस मादक[2] पदार्थ से जैसे ॥ मगन डूबि, बहसे होइ । रट निरंतर कथन ॥

१—क मे नहीं । २—क मे-मादकता ।

मल के अमल कहत सब कोई के अब इनहि मनावै
राम रंग मे मल नहि तेहि ते सोई अमल कहावै ३

मल खुआर रूप लिये—जो दूसरेउ के अपने अस बनावत मतवार बुद्धिउ का रूप बदिल ॥ अमल 'अ' नाहीं ('मल' दोष जे में) ॥

ई रस पोथिन से नहि निसरै केऊ न भाठि चुआवै
देव सुधा रस टप टप टपकै पूरा पकरि चिषावै ४

ई रस ० ❀ ❀ ❀ ॥ देव सुधा रस ० भावः—केवल गुरु (और) राम कृपाधीन। 'पूरा पान पात्र, वा तुरीय भूमिका वाला। पकरि निग्रह करि[1] ॥

[८५]

भजन मे कंटक ये सारे ॥

कपटी कुटिल राजमदमाते जिनहि काम रस प्यारे १

कंटक सूल, (जो) गड़ै औ अकाज करै। सारे सब ॥ कपटी जिनके बोल व्यवहार सोझ नाहीं—छलै मे। कुटिल (जिसे) टेढ़ाइयै सोहाय। राजमद माते [2]लक्ष्मी (रूपी) मदिरा पिय [पी करके] मतवारे। काम रस प्यारे (जिन्हे) कामै रस सोहाय ॥

लोभी दंभी औ बकवादी जग जिनके मुष कारे
नास्तिक श्रद्धा रहित चटोरे ब्रह्म ग्यान मतवारे २

लोभी लालची। दंभी पाषंडी। बकबादी वृथा बोलैया वा (जो) बक-बंध-कारिकै धोखे। मुष कारे ० ऐसे कर्मन करि ॥ नास्तिक जो ईश्वरो के नाही मनते। श्रद्धा रहित (जिन्हे) गुरु (तथा) वेद बचन मे विश्वास नाही। चटोरे (जो) अनेक मत (तथा) शास्त्रन कै नाम (तथा) बाद सीखे। वा धर्माधर्म विचार हीन, केवल जीभि-गुलाम। ब्रह्म ग्यान मतवारे कहावै मात्र के ब्रह्मज्ञानी, चाल (तो) उन्मत्तै की ॥

नाना मत सुनि जे बउराने धर्मपंथ बटपारे
बातुल भूत बिबस औ अमली चेटक नाटक धारे ३

नाना मत सुनि जे बउराने ठीक एकौ नाहीं, (और) आप [स्वयं] धर्म पंथ बटपारे दुसरेउ के 'बटपार' सुपंथ के डाँकू ॥ बातुल बहुत बोलैया। भूत बिबस

१—क मे नहीं। २—ख मे 'लक्ष्मी' काट कर 'राज धन' लिखा है।

(जो) भौतिक (धर्म) मे कोई विकार करि (होते हैं अथवा, जिन्हे) कोई पिसाच ग्रस्तौ मानत। अमली सुरादि सेवी। चेटक नाटक धारे इंद्र जालादि कौतुक देखाय ठगैया ॥

इनको मुष न देषियै कबहूँ रहियै बहुत सँभारे
तिन से / निर्भय करियै सदा / संत समागम नित राम दुलारे ४

इनको मुष न देषियै जिनके संगौ मे दोष। रहियै बहुत सँभारे कि (ये) अपने मे न खैचैं ॥ राम दुलारे संत पहुँचे ॥ १८ ॥

[८६] होरी

कथनी से का होइहै
किछु करनी चाहीं ॥

कथनी केवल बाद बढै है करनी बादहि षोइहै १

कथनी वृथा बाद। करनी जथोक्त चर्जा [यथोक्त चर्या] ॥ कथनी केवल बाद ० जैसे बेदांती कहाय (केवल) कथनिहिं भर (नहीं, अपितु) चाही ऊ चाल कि—ब्रह्मनिष्ठ भए (भी) हिंसा से बचीं; (क्योंकि, जब) सब्र उहै तौ (कौन) केके मारी। करनी बादहि षोइहै द्वैत—अद्वैत (किसी भी सिद्धान्त) पर आरूढ़ भए (सम्पूर्ण जगत) निज इष्टै, तौ (कौन) केसे लड़ी, (अद्वैत सिद्धान्त के अनुसार यदि) सब ब्रह्मै—तबौ (परस्पर द्वेष) न बनी। एहि रीति—

करनीवारो अंत लहै सुख कथनीवारो रोइहै
रहनीवारो जियत मुक्त है टाँग पसारे सोइहै २

करनीवारो अंत लहै सुख जो निष्ठ, अनन्य होई उहै सुख पाई—बेदादि रीति। कथनीवारो रोइहै इहाँ [इस लोक मे भी] ॥

जियत मुक्त है इहाँ, उहाँ। टाँग पसारे सोइहै सावकास से ॥

कथनीवारो मारि पाइके / पायगो बार बार / समुझि समुझि सिर टोइहै
जैसी करनी करि राषी है तैसो बोझा ढोइहै ३

कथनीवारो ० इहाँ, उहाँ ॥ जैसी करनी करि ० अगिले जन्म के कर्म अबौं (फल दायक) ॥

साधनवारो साधन करिकै अंतरमल को धोइहै
कथनीवारे कथतै रहिहैं देव रूप वह जोइहै ४

साधन करि ० सुकर्म, जोग, नाम स्मरनादि ॥
कथनीवारे कथतै० बादी बादै करत बह विचारी ॥ १६ ॥

[८७]

निर्गुन सगुन न जाना
तिन बक बक ठाना ॥
गुनमात्रै जो सो तौ निरगुन
जामे माया गुन सो सरगुन
सगुन रूप मे लागत है घुन
अस जिनके भ्रम ग्याना १

निर्गुन सगुन न जाना का दूनौ कै रूप-तत्व ? **बकबक** वृथा बोल ॥ **गुन मात्रै** गुनै मे गुन नाहीं अंगीकार, पाणिनि मुनिउ मत से { गुणे गुणानंगीकारः } । **सगुन** तीनौ गुन समेत; भाव—प्रगट होव । **भ्रम ग्यान** ० निश्चयात्मक नाही । **घुन** ० काठ आदि मे घुन लगे दृढ़ता नाही रहत, (यहाँ) मायै घुन ॥

एक अंस ते जगत बनायो
तीनि अंस प्रभु पृथक छिपायो
अमृत रूप अस श्रुति मे गायो
सोउ नही उर आना २

तीनि अंस० छिपायो तौ ई श्रुति 'तीन चरन ऊपर राषि प्रकास होय है पुरुप { 'त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः' पुरुष सूक्त } **अमृत रूप** अविनासी ॥

अमृत ब्रह्म अस आपु कहते हैं
तेहि लगि बेद समुंद्र महत हैं
अमृतौ के ईशहि न गहत हैं
जिनहि महा अभिमाना ३

अमृत ब्रह्म 'अमृत रूप-ब्रह्म' (इसमें) 'रूप' कहे गुन लगा । **बेद समुंद्र** बेद जो अपार सागर । **महत** तत्व, रत्न, माखन निकारै हेतु । **अमृतौ के इशहि** ०अमृत जैसे निसरा । **अभिमाना** अहंता ॥

जगत कोऊ आधार धरैगो
सगुन रूप तब गरे परैगो
निरगुन से नहि सगुन ढरैगो
गाय जनै का आना ४

जगत कोऊ आधार धरैगो जैसे सर्वाधार पृथ्वी, सो जल आधार। ऐसेहि सब तत्वन लै अनवस्था चलिहि जाई, (अतः) सब मत मे ईश्वरै सर्वाधार मनहीं के परी। **सगुन रूप तब गरे परैगो** (जो सर्वाधार) सो सगुनै ठहरी। **निरगुन से नहि सगुन** निर्गुन से सगुन होब असंभव—जैसे गाय कै बाघ बच्चा होब॥

गुन कपास तें गुनतें पट है
गुनी बिना गुन थिति दुर्घट है
आदि अंत सगुनै की ठट है
मध्यौ मे सोइ ताना ५

गुन सूत। **पट** कपड़ा। **गुनी बिना** ० तौ बिना 'गुनी' जेहि मे है गुन—रहब कठिन बनै। **आदि** निर्गुन कपास—जेमे सब गुन भरे। **अंत** पट—संसार—जेमे लय पावै, सर्वाधार सत्ता रूप। **मध्यौ मे सोइ ताना** जो देखि परत सोई चैतन्य फइला॥

अहंभाव तजि दास बने हैं
राम चरन रज जाइ सने हैं
नही मान अपमान गने हैं
तेई देव के प्राना ६

अहंभाव 'अहंता,' माया-प्रपंच मे मुख्य 'तजि दास बने हैं', तब—'नही मान अपमान गने हैं'। **देव** स्वामी॥ २०॥

[८८]

बालक जोगी ग्यानी
तीनिउँ निर्मल नयना॥

बालक के दृग रस नहि उतरा जोगी नित को ध्यानी
ग्यानी अंतरदृग सोधे है दुंदन को भल छानी १

निर्मल अविकारी ॥ **दृग रस०** कामादि विकार । **जोगी नित को ध्यानी (जो) मन (को) ताबे** [वश मे] किये ॥ **अंतरदृग** भीतर के दूनौ नयन । **दुंदन** शीत ऊष्णादि जोड़ा । **छानी** एक से एक लड़ाय, न सुख, न दुख । जूड़ गरम (मिलकर) बरोबरै । तब विषमता (रूपी) मइल कैसे आवै ॥ १ ॥

कफ इच्छा अभिमान मइलि से दृग मे होत मलानी
जैसे हिम घन धूरि संग ते देषियत रबि छबि हानी २

कफ कफ से बिंदु आदि । **इच्छा** चाह, 'अभिमान मइल से'—**दृग मे होत मलानी** फूली माड़ा आदि ॥ **हिम घन धूरि ०** हेमंत, बरषा, ग्रीषम मे । [१]**हिम घन** गाढ़ा पाला । **धूरि** सरद आदि (तथा) ग्रीष्मौ मे; औ रोगौ मे फूली—पानी उतरब । 'घन' गाढ़ा पानी, मोतियाविंदु आदि । ऐसे अर्थ करै से जो हिम और बरषा, ग्रीषम उलटा सा बुझात, वा, पाठ क्रम से अर्थ क्रम बलवान[१] ॥

दरसन से दृग सोधत कोऊ होइजात अभिमानी
द्रष्टा की दृग शक्ति न जानी बीचहि मति भ्रमसानी ३

दरसन शास्त्र । **होइजात अभिमानी** विद्या बुद्धि (से) । [१]चाही शास्त्र पढ़ै कै फल—बोध—विनय सम्पन्न होब, 'पर होय जात अभिमानी'[१] ॥ [१]**द्रष्टा की दृगशक्ति** कारन—कि देखै मे द्रष्टत्व (ही) कारन[१], **द्रष्टा** देखैया । **बीचहि मति भ्रम सानी** अंत ले न पहुँचि । (वहाँ तक पहुचने मे)[१] और की कृपा-मानत—'जेकरी जोति से दृग जग देषै तहँ दृग कैसे पहुँचावों'—'राम लगन' ७७ पद में[१] ॥ ३ ॥

दृगहू के दृग राम लषन सिय असि मति जिन उर आनी
तिनके चरन शरन मै आयो इष्टदेव सम जानी ४

दृगहू के दृग राम ० जेहि शक्ति से आँखि देखत ।

(शंका) :—सूर्य प्रकाश से आँखि देखत ।

(उत्तर) :—सूर्यो मे कहाँ से प्रकाश ? धुर लै विचारे प्रकाशक रामै ठहरत तैसे—'आँखि के आँखि' ॥ **इष्टदेव सम** ऐसे ज्ञानिउँ रामै तुल्य ॥ २१ ॥

[८९] काफी

सबके मत से भजन ही आवत ॥

ब्रह्महि भजत भजत कोऊ कर्महि कोऊ तौ शिव शक्तिहि गावत १

सबके मत से भजन ही गीतौ मे लिखा—'चार तरह से हमार भजन करैं हैं ॥ { चतुर्विधाः भजन्ते माम् जनाः सुकृतिनोऽर्जुन । आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च

१—केवल ख में पार्श्व पर-संशोधन रूप मे ॥

भरतर्षभ } ॥ ब्रह्महिं भजत ज्ञानी—ब्रह्मोपासक। कोऊ कर्महि जज्ञादि से 'मीमांसक'[1]। कोऊ तौ शिव शक्तिहि० साधन परा, जैसी उपासना की चाल ॥

अद्वैतौ मै द्वैत सदा है नाहित कैसे फिरि उपजावत
याही ते जग सत्य कहत श्रुति झूठ न जन्म साच ते पावत २

अद्वैतौ मै द्वैत सदा ओही मे सूक्ष्म रूप रहत—तेज मे तम, ज्ञान मे अज्ञान, अज्ञान मे ज्ञान—(केवल एक के) स्थूल—गुप्त, (अथवा) प्रगट होये से नाम परत। **नाहित कैसे फिरि उपजावत** दिन भए राति के अभाव—नास माने-बड़ी छति। सदा—फेर कैसे पैदा, औ कैसे होई ? तैसे द्वैत मे अद्वैत (और) अद्वैत मे द्वैत; केवल सूक्ष्म, स्थूल भए नाम बदलत ॥ **झूठ न जन्म सांच ते०** और बीज और फल-असंभव ॥

जौ परमाणु महत्वौ साथै ऐसे सबमे साथ थहावत
नञ का अर्थौ नही बिचारत अहंकार से बाद बढावत ३

परमाणु अति सूक्ष्म। **महत** अति स्थूल। **सबमे साथ थहावत** सब कै तत्व विचारत ॥ **नञ का अर्थौ नही बिचारत** ❀ ❀ ❀ ॥

एकौ मे पुनि अंग बहुत ते सेवक स्वामी भाव बनावत
आपुइ देव दास पुनि आपइ दूनौ नित्य इहै मत भावत ४

एकौ मे पुनि अंग बहुत जेहि के एक विचारे (वह भी) बहुत अंग मिलि एक अंगी कहावत। दुइ क्रिया मिलि एक कै अंकौ (बनता है)—'उपासना सर्वस्व'[2] के पाचइं सवैया[2] मे स्पष्ट। **ते सेवक स्वामी भाव ०** अंग औ अंगी (के रूप मे) ॥ **आपुइ देव, दास पुनि आपुइ ०** जुदौ नाही, तौ दूनौ नित्य ॥ २२ ॥

[९०]

तब कपि प्रभु के चरन परा है
समुझि समुझि हिय हरष भरा है ॥
मै कपि पामर पशु अति बिषयी शुभ आचरन न कबहुँ करा है
ऐसेहु पर श्रीवदन चंद ते वचन सुधा रस सरस झरा है १

१—क मे नहीं। २—ख मे पाश्र्व पर—

'एहि मे कोउ केवल युक्तिहि के बल लोग रिझावन बाद भनै।
अद्वैत रह्यौ तब द्वैत भयो जस एक गने पर दोय गनै ॥
अब उत्तर जा कहँ एक कहौ वह एक नहीं तँह दोय सनै।
कछु विंदु मिलै कछु नाद मिलै दुइ जोग लगै तब एक बनै' ॥

तब ० चरन परा [1]गुरु शिष्य मरजाद[1]। हिय हरष ० उपदेश सुनि औ विचारि ॥ ऐसेहु पर ० केवल दीन बंधुता ॥

केवल प्रभु करुणै से स्वामी चारिउ जुग मे जीउ तरा है
नाहित मायिक साधन के बल को उधरिहि अरु को उधरा है २

मायिक साधन के बल० सब काल मे । [2]सूक्ष्म ज्ञान कै नाम माया—'रामायन परिचर्या' 'विद्या अपर अविद्या दोऊ' यहि की व्याख्या मे, औ माना ही है, पै-ज्ञान जेमे[2]॥

साधन को फल राम अनुग्रह जाको अंत भरोस षरा है
भएउँ कृतारथ करतब नाही महा मोह तम दूरि टरा है ३

साधन को फल राम अनुग्रह (अतः केवल) साधनै से न मानै (अपितु) साधन करि, बीज बोय—अनुग्रह-फल (प्राप्त करे)। षरा चोखा ॥ मोह तम दूरि टरा है ज्ञान प्रकास पाय ॥

सीता कपि संबाद भयो अस जेहि तें जन को काज सरा है
साची साच दीनतै लपिकै जब तब पूरन देव ढरा है ४

साची साच दीनतै ० सदा ॥ २३ ॥

इति सीता हनुमत्संबाद

अथ रामराज्य बरनन [६१] *होरी*

अवधि पुरी मह छाये
चारिउ चरन धरम के ॥
प्रथम चरन तप ग्यान दूसरो
क्रिया कलाप सहित मष तिसरो
कैसेउँ दान चउथ पद निसरो
सब कहँ भक्ति बनाये १

अवधि पुरी मह छाये चारिउ चरन धरम के और ठाँव तीनै ॥

प्रथम चरन तप जो सत जुग मे प्रधान । ग्यान दूसरो त्रेतौ मे । क्रिया कलाप सहित मष ० द्वापर मे रहा, 'क्रिया' कर्म, 'कलाप' कल्पना करै की रीति जेसे जथार्थ सांगो पांग कर्म होत रहे ॥ कैसेउँ दान ० जो कलऊ लै। सबकहँ भक्ति बनाये चारिउ (वर्ण) के ॥

१—ख पार्श्व पर।

बर्णाश्रम नीके लागत हैं
यथा काल सोवत जागत हैं
निज निज धर्महि अनुरागत हैं
राम चरन रति पाये २

बर्णाश्रम ब्राह्मणादि (तथा) ब्रह्मचर्यादि। यथा काल० 'चारि पहर मे चारिउ जागहिं' (पद-४६) लिखि आये। निज निज धर्महि० स्त्री पुरुष सब। चरन आदर मे। रति प्रिति ॥

जो पवित्रता राम चरन मे
धर्म कहावत सोइ करन मे
जो प्रकास सो ग्यान नरन मे
अंगी राम सोहाये ३

करन इंद्री औ चर्या। प्रकास कर्मप्रकास 'सोई ज्ञान[1]'। अंगी राम कर्म, धर्म ज्ञानादि जेहि के अंग ॥

ग्यानादिक के प्रभु श्रीरघुपति
तिनही के कर सकल जगत गति
सत्य कहौं एतनिहि मोरी मति
श्रीगुरु देव लषाये ४

षट्रितु बरनन [६२] सारंग

अवधि के ग्रीषम की बलिहार ॥
राम प्रताप दिनहुँ दिन बाढत भा जडता परिहार १

राम प्रताप ० राम प्रतापै। दिन दिन बाढत सोई दिन बादत। जड़ता जाड़ा। परिहार लुप्त ॥

राम बाहु छाया मे सबकोउ सुष से करत बिहार
मानस पदुमन के रचि रचिकै रामहि अरपत हार २

बाहु छाया वृक्षादि के ठाँव रक्षक ॥ मानस तलाब—हृदय वाला। पदुमन के० बहुरंगी सुमन वृत्ति ॥

---

[1]—केवल ख मे।

होत न रामचंद्र करुना से जीवन को अपहार
सुमन सुगंध चहूँ दिसि महकत करत राम उपहार ३

रामचंद्र करुना ० राम चंद्रै से सीतल रहत। **अपहार** नास॥

सुमन सुगंध अच्छे मन औ जस। **करत राम उपहार** 'राम को उपहार—भेंट करत, जो—'सुमन' देवतौ, सुगंध-सुजसौ चहूँ दिशि महकत हैं[1] ॥

राज समाज रजोगुन पूरन जामें जीति न हार
देव रूप मे घन रस आगम सावन घन अनुहार ४

रजोगुन ऐश्वर्य के पदार्थ। **जामे जीति न हार** ग्रीषम मे कुहिरा नाही रहत, औ (नभो मंडल) धूरि पूरित। (अतः) इहाँ जीतिहि नाहीं [नाइँ] हार (भी), वा जीति-हार नाहीं, धर्महि से सब चलत॥ **देवरूप** वन-स्याम। **घनरस** निविड जल औ, जे—शृंगार, सांत, वीरादि (वे) सब रस घने, वा 'घन' जो वेद मे[2]। **रस** छ सास्त्र। **आगम** तंत्र—राम रूपै मे—कि (ये सब-आगम निगम) इनहीं के बखानत (एवं राम) रूपै जनावै हेतु। **सावन** श्रवन से (तथा) विष्णुदैवत॥ २॥

[९३]

अवधि मे निति बरषा रितु रहै
सो प्रकार कबि कहै॥
गज माथन तें दान झरत हैं
बड़ी चमक तरवार धरत हैं
गज गाजहिं धौंसे घहरत हैं
डगर डगर रस बहै १

बरषा रूपक—श्लेष से॥ **दान** गजमद, **तरवार** बिजुरी, **गज गाजहिं** गज गरज। **धौंस** बड़ा नगारा, **डगर डगर रस** ० कोऊ रूखे (वा) दुखी नाही॥

बीर बहूटी रमहि चैन मे
बहुत जामकी जगहि रयन मे
छई स्यामता केस नयन मे
चहल पहल चहचहै २

१—केवल ख के पार्श्व पर।

२—घन—वेद पाठ की एक विशिष्ट रीति—'अन्त क्रमं पठेत्पूर्वमादि पर्यन्त मानयेत्।
आदिक्रमं नयेदन्तं घनमाहुर्मनीषिणः॥

बीर बहूटी० बीरन की बधू-तिरिया। जामकी पाहरू औ तोड़ा। छई स्यामता ० घटा सी। चहल पहल ० अरगजादि से आनंदै की चहल पहल मची है ॥

त्रिबिध ताप के नाम गये हैं
जीव जंतु सब हरे भये हैं
नचत दास सुष पाइ नये हैं
　　धर्म छाँह सब गहै ३

त्रिबिध ताप ग्रीषम मे जल, वायु, पृथ्वी (तीनो) तपत। जीव जंतु सब हरे भये हैं 'सामान्य (और) विशेष', जो आधि व्याधि विषयादि से सूखे रहे। (उनमे) नए अंकुर वृत्त से लहलहाए। पीत-स्याम—सीता-राम जोरी के ध्यान से नचत दास मोर से ॥

जा सुष कों ब्रह्मादिक तरसैं
मुनिबर सपनेहु जाहि न परसैं
रामदेव सो सुष नित बरसैं
　　ऊँच नीच सब लहै ४

जा सुष को ० ब्रह्मानंद—राम रूप (तथा) लीला-दर्शन ॥ ३ ॥

[६४]　　*मलार कवित्त चौताला*

रूप घटा छाय रही पीत पट दामिनि सो
　　मुक्तन के हार ते बलाका मोर दास हैं
उन्नत सिंघासन चढि महा रस बरसि रहेउ
　　उदित धनुष जामे तीनि गुनन के प्रकास हैं

रूपघटा घनस्याम। मोर दास नाम रटि सोर करैया॥

महारस बरसि० ❀❀❀॥ उदित प्रकासमान, जन रत्नन मे उठा, ख्यात। तीनि गुनन० मनि सुवरनादि से (तथा जिसका) फल अनुकूलन के (लिये) सतोगुनी—ऐस्वर्ज देवै (तथा) राखै [रक्षा करने] मे; रजोगुनी—प्रतिकूलन के जो गुन छीनै वाला; परम-तमोगुनी—दंडदाता; (अथवा) 'अघोर उपासकन के ध्यान मे धनुष बान लिये मृदु मूरति (एवं) घोरन के (लिये) कराल मूर्त्ति' ॥

१, २—क मे नहीं।

मुकुट के रतन षद्योत भेक याचक गन
चरित नदी करत ब्रह्म सिंधु मे बिलास हैं
राम देव सावन से जग मग भावन हौ
राउरि छबि छटा देषि बढत मन हुलास हैं १

मुकुट के रतन 'षद्योत' [1]"ष—आकाश मे प्रकासक"[1] वरषा जुगुनू से मुकुट के छोटे रतन चमकैया। **भेक याचक०** बड़े छोटे मेजुका टर टुर करि भोग मोक्षादि मगैया। **चरित नदी०** समुद्रन लौ जस फैला। लीलौ विचारै **ब्रह्म सिंधु** अपार—रूप से भिन्न नाहीं॥ **रामदेव सावन से०** सावन देव [विष्णु] से, वा जन-मन-भावन—सावन से'। **छटा** सफाई, चमक। **बढ़त मन हुलास** रामचंद्र को पति जानि॥ ४॥

[६५] सोरठ

अवधि मे नितहीं शरद बिलास॥
निर्मल मानस अंबर पूरन सिय पति चंद्र प्रकास १

निर्मल मानस निर्मलता, [2]'भीतर बाहर'[2], 'मानस' तालाव और हृदयो स्वच्छ। **अंबर** आकास—धूर वादर रहित; (अथवा) कोई मइल नाही (सव) स्वच्छ वस्त्रादि से ('पूरन')। **सिय पति चंद्र प्रकास** रामै चंद्र प्रकास॥

सुजस चंद्रिका तारा निर्मल कुमुद मनोहर हास
तोष अगस्ति छमा सरदी से मिटे दोष दुष डाँस २

चंद्रिका अँजोरिया। **तारा** अनेकन को, वा—'तारा'—अंगद (की) माता पर जो कृपा भई। **कुमुद** कोई, (अथवा) [3]'कुमुद' रिच्छ परजाय औ (भगवान राम के) दल मे जूथप वादरौ[3]। **मनोहर हास** खिलब धर्म॥ **तोष अगस्ति** कोऊ लोभी, असती नाहीं। **छमा०**[4] प्रजौ महाराज की छमा देषि वइसै चलत। **दोष दुष डाँस** दोष और दुष मस औ दंस॥

१, २, ३—केवल ख के पार्श्व पर संशोधन रूप मे।

४, ख मे पार्श्व पर इतना अधिक—'छमा पृथ्वी हिम भूमि की 'भू' सत्ता, प्रताप'।

नील पीत लोहित सर सोहत सेत चँवर ते कास
दीपक से नर नारि भक्ति जनु स्वाती मुक्ति निवास ३

नील पीत० सर [तालाब] कमल (की आभा) से अनेक रंग के, (अथवा) मणि सुवर्नादि से बने (होने से) । **सर** तीर । **सेत चँवर०** कास फूल से ॥

दीपक से नर नारि अपने कुल के प्रकासै करै वाले औ जगमगात औ [1]दिवा-रियै से सदा घर बने । **भक्ति जनु स्वाती०** परा-भक्तिहि स्वाती (जो) **मुक्ति** मोती (रूप मोक्ष की निवास भूमि) ॥

परम भक्त चातक से जिन कहँ राम बिंदु की प्यास
देव चकोर भये जेहि केवल रूप दरस की आस ४

परम भक्त (जो) ज्ञानौ के अपने साधन मे माने—अनन्य, रामै से जचैया—सेवक बनि स्वामिहि सर्वत्र देखत औ रटत । **राम बिंदु** राम बिंदु—रूप 'तापिनीय' मे ॥ **देव चकोर भये०** राम चंद्र के ॥ ५ ॥

[९६] भैरव

हिम रितु जनु अवधि मे बसो अनंद पायकै
आपन दिस देस जानि गुन कला बनायकै १

आपन दिसि० उत्तर कोशल (मे हिम की) मुख्यता । **हिम** पाला जेहि के परे (हिम) रितु कहावत । हिमालय—घर सोई अवधि भूमि । **गुनकला** गुनन की कला (या) गुन औ कला ॥

सुरस जहँ अरोगता बिलास निशा भायकै
सुख के से दिवस जात मनहु धाय धायकै २

सुरस जलादि मे स्वाद । **अरोगता** सरद से जो रोग लगे (वे) छुटि अरोग । **बिलास निशा** बिलास जोग बड़ी राति ॥ **सुख के से दिवस ०** जैसी दुख की राति बड़ी देखात, वोके प्रतिकूल सुख के दिन ॥

ब्रह्म मूल नषत उपर रहत भानु आयकै
याते यह संवत को आदि कह्यो गायकै ३

ब्रह्म मूल नषत ० हेमंत मे मूल के सूर्य, (और) सर्व-मूल ब्रह्म ॥ **याते यह संबत को आदि ०** जगत-आत्मा, सर्व-प्रवर्तक सूर्य मूल के होये से; कृष्ण सुधा (९२ पद)

१—ख—मे 'दिवारी ऐसे' ।

मे स्पष्ट निरुक्ति—[1]"याही ते कहियात रितु हेमंत"[1]। [2]वेद मे तीनौ लोक करि तीन संवत लिखा—देवतन कै सरद से, औ नागन कै हेमंत से, औ मनुष्यन कै वसंत रितु से[2]॥

शरद हिम बसंत कहे श्रुति मे मिलगायकै
चंद्र भानु देहौ को नूतन ठहरायकै ४

श्रुति मे पुरुष सूक्तादि मे— { 'वसन्तोऽस्यासीदाज्यं, ग्रीष्म इध्मः, शरद्धविः' } चंद्र भानु देहौ को [3]पुरुष सूक्त मे शिरो भूषन सूर्य[3] महा विराट के रीत ॥ ६ ॥

[९७] बसंत

नित बस्यौ अवधि मे जनु प्रयाग
जो परम शिशिर रितु को सुहाग ॥

सीता छबि निर्मल करनि गंग रघुपति छबि जमुना सदा संग
दोउन को अनुराग रंग सोई प्राची शारद अंतरंग १

०अवधि मे जनु प्रयाग० चार रितु (ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंत) अवधि मे मुख्य। अब सिसिर मे मुख्य—'प्रयाग'—सो कहत हैं—

कैसे, सीता छबि निर्मल करनि० आपौ (निर्मल, तथा) औरौ के (निर्मल करने वाली) गंगा सी; [4]औ गंगा के एक धारा का नाम सीता, औ गंगा सत्तमी [वैशाष शुक्ल सतमी] (तथा) जानकी सत्तिमी [फाल्गुन कृष्ण सतमी] (अतः तिथि सतमी की समता से भी दोनों) एकै अभेद मानि[4]। 'रघुपति' छबि जमुना० स्याम बरन (तथा) सूर्य-वंशी (दोनो) ॥ अनुराग रंग लाल। सोई० अंतरग गुप्त, सोई प्राची पुरुव मुष, जैसे वेद मे लिखा—'जहाँ गंगा औ जमुना प्राची जहाँ शारदा' ॥

सूलटंक धनुबान व्याल बदन सोम सित रदन माल
अक्षय बट हनुमंत लाल होत परसि जेहि जन निहाल २

शूलटंक धनुबान व्याल शूलटंक (नामक) उहां [प्रयाग मे] महादेव, औ वासुकी, शेष (और अयोध्या मे) 'धनुबान' ० धनु कै टंक बान-चढ़ाये—त्रिसूला-

---

१—ख मे पार्श्व पर सम्पूर्ण पद उद्धृत है। २, ३, ४—केवल ख मे पार्श्व पर।

कार और बेचिल्ला—सरपाकार धनुष, (तथा) बान चलै औ डसै कै धर्म लेइ (शेष की उपस्थिति)। **बदन सोम** बाकी श्रुति मे—'जहाँ सोमेश्वर देवता', (अवध मे) मुख-चंद। **रदन** दाँत। **माल** पाँति, भाव—बत्तीस (रद) दुइ दुइ दिन राति लेइ—एक एक करि सोरह औ कला के आकार। (इन साधर्म्यों से) चंद्र, मुख (की) उपमा पूर करत, औ स्वच्छता (तथा) अहलाद धर्म जाहिरै ॥ **अक्षयबट** अविनासी। हनुमंत अमर। लाल ज्ञान, भक्ति रंग (तथा) बट पत्रौ नए, औ फल (लाल) ॥

भानु चंद को जोग जात श्रवन मकर रबि ब्यतीपात
महा पर्ब मे बुध नहात लावत रघुपति से सरस नात ३

भानु चंद सूर्यबंसी रामचंद्र। **श्रवन** कान मे **मकर** मकराकृत (कुंडल ही) मकर गत सूर्य के नाईं। (तथा) सोने कै तार—किरिन, बीच मे लाल मनि—सूर्य, (तथा) दूनौ ओर कुंडल के मोती चंद्र। **व्यतीपात** राहु आकार—मंगर मुह ॥

महा पर्ब शुद्ध करैया, 'मकर' विष्णु दैवत से पवित्र तम सूर्य तेमे। **नहात** (अवध मे राममंद्र के) रूप विचार से। **रघुपति से सरस नात** ० सेवक स्वामी आदि भावना कै ॥

तजि देह भाव कँह कोऊ धीर लहत अमृत पद बेद हीर
भूदेवन्ह कै भई भीर उमगत अनंद जनु तीर तीर ४

तजि देह भाव ० श्रुतिहि मे लिखा—'जहाँ देह विसर्जन करै हैं—ज्ञानी लोग—ते पुरुष अविनासी पद को पावै हैं' ॥

भूदेवन्ह को भई भीर भूमि मे देवतन की भीर भई साक्षात्, औ अवतार लेइ, वा, 'भूदेव'—ब्राह्मण। **उमगत** अधिक भए। **तीर तीर** तीर मे श्लेष ॥

[६८]   होरी बसंत

महकै सिय अंग बसंत सोई कर पल्लव कोमल लाल लसे
मुख चंद चुवै रस बोल सदा पद पंकज मानस मे बिकसे

महकै सिय अंग ० मुख्य सुगंध—पदिमिनी। साधारन पद्मिनी (नारी भी) महकत तौ जानकी जी के का कहा चाही। **कर पल्लव कोमल लाल** ० नौ [नव] पत्र कोमल (तथा) अरुन होत ॥ **मुख चंद** वसंतौ कै चंद निर्मल। **चुवै रस बोल** सुधा से वचन रसीले। **मानस** ० दासन के हृदय—मानस मे। **पद पंकज** राम के चरन कमल, इहाँ [श्री जानकी जी के हृदय सर मे] पद-देवता सिरोमन (रामचन्द्र) ॥

सर लोचन भौंह कमान कसे जग जीतन को जनु काम बसे
अलि कुंतल जोबन रंग बनो समता लपिकै नरदेव हँसे १

कमान कसे रितुराज काम सखा । सर लोचन सर से ((सर से)) (अर्थात्) कटाक्ष से—राम से धीर के घायल करैया । जग जीतन को ० रुद्रौ के ॥ अलि ० भ्रमर सी स्याम अलक । जोबन रंग ० किसोर—वसंत (ऋतु) (तथा) काम भी । समता-दिन, अंग (तथा) अवस्था (मे) नरदेव राम महाराज ॥ ८ ॥

[९९]

होय रही ऐसी होरी
श्रीअवधि पुरी मे ॥

सुमति सोहागिनि सब संतन की प्रेम रंग मे बोरी
राम कथा पिचुकार चलावत लक्ष्य राम के ओरी १

प्रेम प्रीति—पीत—कि प्रेमिन के मुखौ पर झलकत ॥ सुमति सोहागिनि आत्माराम की ॥ राम कथा पिचुकार उहै (राम) चरचा । लक्ष्य ताकि ॥

सुरति निरति जोगिन की सखिया नजरि एक टक जोरी
राम झलक मे मगन भई है जैसे चंद्र चकोरी २

सुरति सुंदरप्रीति । निरति औरन से निवृत्ति, औ निज इष्टै मे भली तरह लगन ॥ राम झलक मे मगन ० जोग रीति ॥

दोउन की उपाधि तजि ग्यानी असिल भाव टकटोरी
आतम रामहि से बिहरत उपनिषदन की बरजोरी ३

दोउन की उपाधि ० सद् असद् । असिल भाव (केवल) असिल भावै । टकटोरी निश्चय करि ॥ उपनिषदन की बरजोरी जो उपनिषधन मे बहुत विस्तार से (उक्त) वा उपनिषदन मे 'बर'—श्रेष्ठ तेसे 'जोरी' मिलाय ॥

लाल गुलाल अरगजा पुरजन षेलि रहे पोरि पोरी
पतित चरन पंकज रज ही से चाहत प्रीति न थोरी ४

पुरजन इंद्री, ('पुर') ग्राम ('जन') प्रजा (अर्थात्—शरीर-पुर मे) रहैया (इंद्रिय-ग्राम) । षोरि षोरी नाड़ी नाड़ी ॥
चरन पंकज रज ० अरुन (चरण) कमल से पराग । न थोरी बहुत ॥ ९ ॥

[१००] *होरी सिंदूरा*

मेरे नित ही रहै होरी बसंत सखि राम दुलह को पाय ए
प्रेम रंग पिचुकार चलत है लाल गुलाल उडाय १

मेरे ० उक्ति–मति (की) ॥ प्रेम रंग ❀ ❀ ❀ । लाल गुलाल अनुराग ॥

एकटक देषि रही वाही को देह दशा बिसराय
बनो देव सेवक को नातो मंगल गाय बजाय ए २

देह दसा बिसराय विदेह । एकटक और (दृश्य) से रोकि ॥

[१०१]

होय रही है होरी राम बागन मे नित ॥
कोइल गावत भँवर बजावत निरतत रंभा धोरी १

होय रही है होरी ० भावकन [भावुक] के विचार मे ॥

कोइल ० पंचम सुर से–जो वसंत मे मुख्य । भँवर बजावत सारंगी मुरचंगादि मे जो प्रधान सुर । रंभा केरा (तथा) अप्सरा ॥

फूल रंग रस बुंद झरत जनु महक उठत चहुओरी
पंछी मनहु प्रसंसक झूमत आगम की झकझोरी २

फूल रंग रस बुंद ० मकरंद—प्रीति, अरुनादि । महक उठत ० उनही—पराग, मकरंदन की ॥ पंछी प्रसंसक । झूमत सुख देखि, रूप विचारि । आगम पेड़; अनेक साखी वेद (एवं) तंत्रौं ॥

सीय भूमि आराम राम जू मिली सनातन जोरी
चंपक केसर धार परत है ओढर दाडिम रोरी ३

सीय भूमि सत्ता । आराम राम भले जो रमैया (अथवा) रमा । मिली सनातन जोरी भू (एवं) भूपति (की) ॥

चंपक-केसर ० पीत पिचुकारी । ओढर बुक्का । दाडिम अनार—स्वेत, लाल बीज, (होली में) बुक्का गुलाल रोरी; वा भोडर, दाड़िम औ रोरी । वा, रोरी—वृक्ष फल से निसरत जो 'कमीलौ'—(नाम से) ख्यात ॥

कुसुमित लता मनोहर ते जनु बाल उमिर अति थोरी
काम देव को सपा लषन जनु बढत नेह की डोरी ४

कुसुमित लता ० वृक्षन की लता उनके नामन से (ख्यात) जैसे 'पारस' की—परासिन, वेल की—वेला आदि ॥ काम देव को सपा बसंत गोसाईं जी बसंत कै उपमा लछिमन जी को दिये—अयोध्या कांड मे । बढत नेह की डोरी अभेद ॥ ११ ॥

[१०२]

तेरी सूरति मन मे गडि गई ॥

देषत रूप झलक दूरिहि ते मेरी अँषिया लडि गई १

पूरन राम दया से नीकी पासे की गति पडि गई

मानौ कंचन के भूषन मे हीरा मोती जडि गई २

पासे की गति ० जीत (वाली) ॥ कंचन के भूषन ० नर तन जथार्थ बना ॥

राम तिहारी मूरति देषत कर्मन की गति अडि गई

माया गुन सुभाव कालहु की अँषुरी पँषुरी झडि गई ३

कर्मन की गति अडि गई कि (आपकी मूर्त्ति) कर्मज नाहीं ॥ माया-गुन-सुभाव कालहु ० जिनमे धोखा, जगत-कारन कै रहा। अँषुरी अंकुर, पँषुरी दल ॥

राम सनेह सुधा रस चीषत बिषयन की रति षडि गई

राम देव तुम मै अनुचर हौं अब तौ ऐसी मडि गई ४

सनेह सुधा रस ० जेमे अति स्वाद-अविनासी। षडि गई उखड़ गई। मडि गई ठनि गई (अथवा) भूषित भई ॥ १२ ॥

[१०३]

बडो यह झगरा अब लागा

माया जीव को राम ॥

माया कहै मै कमल बासिनी सुनु रे जीव अभागा

पद कमलौ मे मही रहौंगी तैं का करसि तहँ रागा १

कमल बासिनी लक्ष्मी। राग चाह ॥

जीव कहै सो बिमल हंस पद तूँ मलीन जस कागा

वाको तेरो नही मेल मिलत है बिरथा लगावसि दागा २

बिमल सुद्ध, सत्। तूँ मलीन तम मिली ॥ नही मेल मिलत है तेज तम की नाईं। लगावसि दागा तैं सबल [शबल] चितकाबर करब (अर्थात् सत्य को) झूठ मानब (यही तुम्हारा धर्म है) ॥

माया कहै तूँ चेरो हमारो सदा विषय रस पागा
का सरबर हमही से ठानी झूठो पहिरि कै बागा ३

विषय रस पागा (जब जब तूं मेरे) विषय (रूपी) माया-जाल मे फँसा, तौ गुलामै बना ॥ बागा कपड़ा, कि भगवानो लिखे है—'देह के कपड़ा...' ॥

सुनु माया प्रभु चरन कमल मे दासन ही को भागा
पराभक्ति ठकुराइनि हमरी तेरो न लगिहै थाँगा ४

दासन ही को भागा हेतु—कि दास कै सब स्वामिहि कै (क्योंकि सेवक) अनन्य (उत्ते) दूसर नाहीं—स्वामी के सेवाय। (इस प्रकार सेवक के लिये) आपन (सर्वस्व) स्वामी कै (और) स्वामी कै—आपन, तौ देहादिउ जो (वह) मायिक कैसे रहा ॥ हमरी भक्तन की। थाँगा जहां चोरन कै सूत लगा ॥

माया कहै तूँ मेरो बनायो जीव बचन तब माँगा
आपु गई आनहु के षोवत समुझसि नीक न नागा ५

बचन परमान ॥ आपु गई मिथ्या ठहरी आनहु को षोवत जैसी जरि तैसै भया चाहै अंकुर (और) फल ॥

प्रभु बोले तन दास हमारे इहाँ न तेरो तागा
तूँ अभाव मे झलकि रही है सुनत जीव तब जागा ६

अभाव ज्ञान—निज रूप (के)। जीव तब जागा जो मोह निद्रा मे रहा ॥१३॥

[१०४] होरी

अब कलजुग आवा
घट घट पातक छावा ॥

कलि को प्रथम चरन जिनि जानो
द्वापर अब दुइ चरन बषानो
प्रथमहि को तिसरो करि मानो
चउथौ डंक बजावा १

कलि कलहादि पाप मय ॥ प्रथम चरन धर्म चारिउ चरन सत्यै (युग) मे। एक एक चरन हानि—और न [अन्य युगों] मे। डंक बजावा कि धर्म न रही ॥

झूठ पषंड अकर्म अदाया
पाप चरन को चौक लषाया
चरन धर्म को एक बचाया
सोई बीज बनावा २

झूठ एक १ कि, अनेक इतिहास; त्रेता में जैसे—सती सी (पत्नी) महादेव (जैसे पति) सो (भी असत्य) बोली। पषंड धंध—दुइ २, मिथ्या—वासुदेवादि की कथा। अकर्म तीसरा, न कर्मादि मे श्रद्धा (और) न (वे कर्मादि) बनत। अदाया चउथो, आस्तिकता कम। चौक चौकड़ी। चरन धर्म को एक ० (क्योंकि) जौ अभाव होय तौ फेर कैसे होय ॥

ग्यान जोग जिउ लेइ पराने
धर्म कर्म के रूप हेराने
कलि के डर साधन थहराने
नामै पार लगावा ३

ग्यान जोग जिउ ० जो और जुगन मे बनत रहे। नामै पार लगावा कि उनके [अन्य ज्ञानादि के] साधन कठिन (पर) नाम मे कौनौ नेम नही ॥

नाप प्रताप सदोदित जागा
जाके डर कलि को तम भागा
बाढत देव चरन अनुरागा
जाको जस श्रुति गावा ४

जाको जस श्रुति गावा जेहि के नाम का बड़ा जस { 'यस्य नाम महद्यशः' } ॥

[१०५] झँझवटी

व्यापा कलजुग का साका
सब पुरुषारथ थाका जी ॥

लोग ईश्वरै के नहि मानै श्रुति की कहौ कथा का
बापहि बाप न कहै सो कैसे कहिहै काकहि काका १

साका० जो सब व्यौहार मे फैलै। लोग ईश्वरै के नहि मानै० जेहि के जानै हेत वेद (जब उसी को नही मानते तब वेद क्या है, अतः वेद) आस्तिकनै बदे ॥ बाप पैदा करैया। वेद पुरुषौ उहै, जेसे—अव्यक्त ईश्वर के निस्वास से वेद निश्वति की नाईं। 'निःश्वात' भाव अनादि निरंतर। सो वेद पुरुषै माने टंका मिटत। ईश्वरौ अनादि औ वेदौ, तौ (वेद भी) पिता—ईस्वरै—तुल्य माना चाही॥

काम आदि भट छेकि रहे हैं धरम पंथ को नाका
इनहि मारिकै निबहि जाय जग को अस जनमा बाँका २

काम आदि० छवो। ०नाका जहाँ पहुँचि पंथ पावै॥ **बाँका** जो अपने सूरता, सिपाहीगरी करि न झुकै और से॥

दिन दिन चोर अधरमी बाढे परधन को जिन्ह ताका
जो कोउ चढै धर्म के पथ पर परै ताहि पर डाँका ३

दिन दिन चोर० ते चोर (सकल) अधरमी (पर) मुख्य उनमे झूठे॥ **धर्म के पथ पर० डाँका** जैसे कोई (श्रद्धालु यदि किसी) साधु ब्राह्मण के (कुछ) दिया चाहै (तो ये 'चोर अधरमी') बहुत झुकत (जिससे) कि (दाता) लाचार, (और उसे) श्रद्धा (से) अरुच होत॥

जिन्ह अपनी रसना यह रोकी नारी मुष नहि झाँका
राम नाम को षरग लिये ते निबहे हाँकी हाँका ४

०रसना यह रोकी मिथ्या कहै औ स्वाद लोलुपता से। **नारी मुष नहि झाँका** इंद्रिय दमन किए॥ **राम नाम को षरग लिये०** सोई बाँका॥ १५॥

[१०६] झँझवटी

यारो नेकी अब करना
आषिर को है मरना॥

धन जोबन के जुलुम जोम से एता नही उछरना
कधी जाल मे फसि जावैगा ज्यौं जंगल का हरना १

धन जोबन के जुलुम० धन जोबन के जोम कै जो जुलुम। **जोम** मत्तता। **जुलुम** अन्याय॥ **०जाल मे०** माया वा कर्म (के)॥

गनी गरीबों को हकनाहक ऐसा नही रगरना
दो दिन की हशमत यह तेरी साहेब को कुछ डरना २

गनी जामिनी शब्द । हे 'गनी' धनी । **गरीबों को** 'गरीब' जमन कोस मे मुसाफिर शब्दार्थ, आर्थिक धन मे रहैया नाही (अर्थात्) कंगाल, औ 'गनी गरीब' लोकोक्ति । **हक** सत, **नाहक** असत् ॥ **दो दिन** जनन औ मरन । **हशमत** जामिनिहि (शब्द) संपति, विभूति । **साहेब** ईश्वर जामिनीय ॥

कुफर करै अधरम की दौलत मसल बाँस का फरना
अभीं तुझे मालुम नहि पडता अंत पडैगा भरना ३

[1]**कुफर** जमन कोश मे ईश्वरादि न मानब । **अधरम की दौलत** असत धन । **मसल बाँस का फरना** कि ऊ कोठी नाही रहत औ झुराये वही से आगि पैदा होय कुल जरत । भाव—गत [खराब] से जो मिलाव (उसे) दुरावत, कि तब (उसमे पड़ने वाला) केहू के न मानी ॥ ०**अंत पडैगा भरना** कर्मन के फल भोगै समय ॥

जानि बूझि टेढे रस्ते मे बंदे कदम न धरना
देव देव कहि राम राम रटि भवसागर को तरना ४

टेढे रस्ते मे टेढ़ा रस्ता घुमावै वाला । **कदम न धरना** जाए कै का बात । **बंदे** दास ॥ **देव देव**, ०**राम राम**० वीपसा बारंबार मे ॥ १६ ॥

[१०७] *होरी*

इन्ह थोथिन पोथिन को तजिकै वह पोथी क्यौं नहि पढता है
जिस पोथी को पढिकै ब्रह्म अंड पिंड को गढता है

थोथी पोथी जिनमे सार थोर । **वह पोथी** जो जोगाध्याय देहचर्या से जनात; जो प्रायः लुप्त औ (जिसके) पाठखौ [कौ] (प्रायः लुप्त) ॥ ०**ब्रह्म अंड पिंड**० आपनै रूप वेदौ । ईश्वर कै (जितने) अंग प्रत्यंग सोई वेद पुरुष, (जो) विराट् औ सूक्ष्म—प्रनौ, अर्धमात्रा (तथा) विंदु से फैला—बटुरा । (अतः) आपनै रूप से अंग, उपांग (सहित) वेदादि बैठावै औ लगावै ।

१—**कुफर** जामिनीय, अनीश्वर भाव । 'श्री' ईश्वरै सत्ता । **अधरम की दौलत** असत धन, जो कुरीत से बटुरा । **मसल वास का**०—' प्रस्तुत पद की यह व्याख्या दो पृष्ठो को रिक्त छोड़कर उपर्युक्त रूप मे परिवर्तित की गई है ।

जिस पोथी मे मगन सदा शिव जालिम जहर न चढता है
सो पोथी तोहि देव पढाई राम जहाँ से कढता है १

जिस पोथी आपन रूप । **जालिम जहर न चढता है** विषादि, पर सत्रु हाथ से मारक (१) **सो पोथी०** वा वेद (जहाँ) इहाँ (वेद) रहौ [असमर्थ] ॥ १७ ॥

[१०८]

लोग कहैं राम बसत अवधि मे
राम बसैं याही घट मे
कठपुतरिन कों कौन नचावत तार धरे अंतर पट मे

राम रमा सो राम ॥ **कठपुतरिन को ०** विशिष्टाद्वैत रीति; जीव परतंत्र । (कठपुतरिन मे) बहुबचन से—मन (तथा इंद्रिय कै प्रेरक) । **तार धरे अंतर पट मे** सरीरी पुरुष ॥

बैठि एकंत पैठिकै देषौ झिलिमिल सरजू के तट मे
रतन सिंघासन जगमग तापर बैठे राम बडी ठट मे १

बैठि एकंत योग रीति । **देषौ** ज्ञान आँखि से । **सरजू** सुखमना [सुषुम्णा] **झिलमिल** अंतर जोति, झलझलाहट ॥ **रतन** नरतन, दुइ निषेध ['न' रत 'न'] से निश्चय—'रतनै' जो (साहित्य मे) काकु कहात । **जगमग** झल झलात वा जो जग के मग मे है ॥ १८ ॥

[१०९]　　　　*होरी सिंदूरा*

कोउ कैसें देषाइ सकै वा प्रभु को आँषनहुँ की आँष
जैसे माषन चाषन को रस सोइ जानै जो चाष

वा प्रभु को ० आँषनहुँ की आँष आँखि से सब लखावत (पर) आँखि मे जो द्रष्टत्व सक्ति जेहि करि । महाविराट कै प्रकासक सूर्य—सो जेकर नेत्र । श्रुतिउ मे लिखा—'जेकर प्रकास लेस सूर्य विजुरी आदि मे' ॥ **जैसे माषन ०** सब—जड़, अंध बधिर—सो कैसे द्रष्टा को लखावै कीं शक्ति पावै । अपने बूता भरि जहाँ लै पहुँचि वोके आगे कैसे जाय, दृष्टांत:—माखन (का) स्वाद खवैयै जानि सकै ॥

यामे तिल भरि और न मानौ कोउ कहौ किन लाष
रामदेव नित जिय मे जागौ मेरो यही अभिलाष १

कोउ कहौ किन लाख और जुक्ति केऊ (कितना भी क्यों न) कहौ ॥

[११०] झँझवटी

नहि मरम किसी से कहना
आय पड़ै सो सहना ॥

बकवादन मे सार नही है ज्यौं पानी का महना
कथनी छोडि साध संतन की करनी रहनी गहना १

मरम भेद । **सहब** उठाइ लेब ॥
बकवादन मे सार नही वृथा बाद मे तत्व नाही, जैसे पानी महे माखन नाही निसरत । सुद्ध तत्वै विचारे सार पावत ॥ **कथनी** अध्यात्म विद्यादि बाद करै की (वस्तु) नाही, विचार ही कै । **करनी** काम औ **रहनी** जैसी ज्ञानिन की चाही, (कि) अपनेहिं तुल्य सबकै कलेस बूझै (एवं) जैसे ब्रह्म मे असंग, अनीह आदि गुन (वैसे ही) अपनो मे राखै ॥

छमा साधिकै कोप अगिनि से सुषी जीव नहि दहना
जानि बूझिकै मोह नदी मे बार बार क्या बहना २

छमा साधि जुडवाय । **सुषी जीव** आनंद (का) प्रतिबिम्ब । **दहना** जरावना ।
मोहनदी ० **बहना** क्रोध, लोभादि से ॥

देषि और की दौलत दुनिआ कधी नही कुछ चहना
आपै से तौ आय मिलैगा धरा अपाना लहना ३

दौलत दुनिया 'दौलत' धन, 'दुनिया' संसार मे; जामिनी शब्द ॥
लहना उधार वाला, फिरा धन अर्थात् संचित कर्म ॥

जाय एकंत राम को भजना किसमत माफ़क रहना
औरन से क्या मतलब हमको राजा होय कि सहना ४

किसकत भाग, जामिनी (शब्द) ॥ **राजा** बड़ा । **सहना** छोटे, जो थोरे दिन औ महीना के (ही होने पर) खेत खरिहान जात ॥ २० ॥

[१११] काफी

तेहि दिन हँसि हँसि मंगल गाउब ॥
जेहि दिन पिय देषब घट ही मे उनके अंग से अंग लगाउब १

मंगल गाउब मति कहै है ॥ **पिय** प्रिया । **घटही मे** सब घट वासी के ।

उनके अंग से ० भावना भेद करि, ज्ञान (एवं) बेदादि (से) जैसी मूर्ति जो माने, सगुन, निर्गुन । **अंग** तैसी अपनौ अंक कल्पना ॥

सषी सषा जहँ पहुचि न सकिहैं तेही महल मे पलंग डसाउब
नख सिष रूप देषि प्रीतम को जनम जनम की जरनि बुझाउब २

सषी वृत्ति औ इंद्री आदि । **सषा** मन, विवेक, बिचारादि औ इंद्रिय के देवतौ । जहँ **पहुचि न** ० गति नहीं । **महल** ऊ भूमिका (वाले) मंदिर । **पलंग** आगे कहि आये { पद–६० } ॥ **नख सिष रूप** ० पूर्व [पूर्ण] सुंदरता आदि कै खानि । **जनम जनम की जरनि** ० संचित, वा 'जनम' बार बार लेवै कै ॥

झूठो षेल छोडि गुडियन को साचे पिय से नेह बढाउब
प्रीतम संग अगम सुष भोगब भूलिहु कै मैहर नहि आउब ३

झूठो षेल ० (जिससे) पिया न मिलैलैं (अर्थात्) झूठा खेल, संसारी । **साचे पिय से** ० जेहि करिकै सब प्रिय लागै हैं (और) जेहि बिना एकौ (प्रिय) नाहीं ॥ **अगम सुष** जो विद्या, बुद्धिउ करि न जनाय वाला । **मैहर** मायिक घर ।

देव धरम अपनो दिढ करिकै सोवत जियरा ताहि जगाउब
ना तिल बढो न घटो रती भरि जस को तस है अस ठहराउब ४

देव धरम, आसुर विरोधी, दिव्य औ 'देव' पति, औ 'धरम' दिढ़ जब्र । **सोवत जियरा** अविद्या, मोह नीद में ॥ **ना तिल बढो न घटो** ० जथा स्थित । नव ठाँव फैलौ (संकुचित होने पर) फिर बइसै । (उसके संबध मे ह्रास विकास की भावना केवल) भूल (जैसे) स्वप्न मे बहु रीति जे बूझे रहे (जागने पर) एकौ ठीक नाहीं ॥ २१ ॥

[११२]　　　　सोरठ

अवधि से दिन दिन बाढउ नेह ॥
अँचहु सुधारस श्रीसरजू को जाउ बिषय रस तेह १

जाउ बिषय रस तेह विषय रस औ 'तेह'–इरष–जाउ, (अथवा) 'तेह' 'ते एह' वै इहाँ से (जाउ) ॥

रामचंद्र पद नीको लागउ जस मूढन को देह
पाइ वमन से मन से उघिटँथु धन दारा सुत गेह २

जस मूढन को देह अत्यंत प्रिय (ता) मे दृष्टांत ॥ **घाइ बमन से** ० भाव स्वाद तौ लेइ चुके (अब) केवल घिनावन अपावन रहा—कूकुर ऐसे के योग्य ॥

केवल पदही सें गति भाई संतन को मत एह
बे पद की जो बात कहै कोउ ताके मुप मे पेह ३

पद हक औ चरन । **संत** पहुँचे ॥

बे पद कुपद वा यहि पद से विमुख होये की बात जो कहै ॥

संत चरन रज बिमल करउ मन जैसे पट कँह रेह
देव देव करुना से बरिसउ सदा धरम को मेह ४

बिमल करउ ० विषय वासनादि (का) जो नेह लगा ॥ **देव देव** राजन के राजा, देवतन के देवता ॥

[११३] बसंत

हित मीत बनारस भूपति के युवराज महामति मानधनी
श्रीराम प्रसन्न प्रसन्न रहैं यह रामसुधा एहि हेतु बनी

बनारस भूप विस्वनाथ । **मीत** राम । **युवराज** बालिमीकि राजकुमारै कहे ॥ श्री राम प्रसन्न बाबू राम प्रसन्न सिंह जी, जो (श्री स्वामी जी के) कृपा पात्र रहे उनके हेत, वा 'रामप्रसन्न' सिंह पर राम प्रसन्न रहैं यहि हेतु ॥

मुनि अंक अठारह संबत मे तिथि मोहन जन्म अनंद सनी
अब कृष्न सुधा छबिदार सुनौ जेहि मे बरनी सब बात छनी १

इति उत्तरकांड

मुनि ७ । **अंक** ९ [१८९७ वि०] । **मोहन जन्म** कृष्णाष्टमी ॥ **अब कृष्न सुधा** ० जिन चरन के अनुग्रह से ई पूरा भया उहै राखि 'कृष्न-सुधौ' [श्याम-सुधा भी] लिखब ॥ २३ ॥

इति राम सुधा—कपिलीला युक्त

बाल्मीकि राम जतम लीला जबै राम नगर के माहि ।
रामचंद्र नव चंद्रमिते पूरन तिथि रवि पाहि ॥
॥ १९१३ सम्बत ॥

8731